॥ ऋषिका ॥

स्मारिका

10वाँ राष्ट्रीय अधिवेशन

अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना
मैसूर (कर्नाटक) : 24-26 दिसम्बर, 2015

अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना : दशम राष्ट्रीय अधिवेशन

मार्गशीर्ष शुक्ल चतुर्दशी-पौष कृष्ण प्रतिपदा, कलियुगाब्द 5117

(दिनांक 24-26 दिसम्बर, 2015 ई०)

मैसूर (कर्नाटक)

भारतीय संस्कृति में नारी : अतीत से वर्तमान तक

संयुक्त आयोजन

अखिल भारतीय
इतिहास संकलन योजना

मैसूर विश्वविद्यालय
मैसूर (कर्नाटक)

प्रकाशकीय

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते...

भारत में सदैव नारी को उच्च स्थान दिया गया है। समुत्कर्ष और नि:श्रेयस् के लिए आधारभूत 'श्री', 'ज्ञान' तथा 'शौर्य' की अधिष्ठातृ नारी रूपों में प्रगट देवियों को ही माना गया है। आदिकाल से ही हमारे देश में नारी की पूजा होती आ रही है। यहाँ 'अर्धनारीश्वर' का आदर्श रहा है। आज भी आदर्श भारतीय नारी में तीनों देवियाँ विद्यमान हैं। अपनी संतान को संस्कार देते समय उसका 'सरस्वती' रूप सामने आता है। गृह–प्रबन्धन के समय 'लक्ष्मी' का रूप तथा दुष्टों के अन्याय का प्रतिकार करते समय 'दुर्गा' का रूप प्रकट हो जाता है। अत: किसी भी मंगलकार्य को नारी की अनुपस्थिति में अपूर्ण माना गया है। पुरुष यज्ञ करे, दान करे, राजसिंहासन पर बैठे या अन्य कोई श्रेष्ठ कर्म करे तो पत्नी का साथ होना अनिवार्य माना गया है। नर–नारी सम्बन्धों का सुन्दर रुप दाम्पत्य जीवन है। आधुनिक युग में भी शिक्षित, जागरुक, चरित्रवान् सुपत्नी ही आदर्श भारतीय नारी है।

भारतीय संस्कृति व संस्कार में नारी अबला नहीं रही है। प्राचीन भारत की नारी, समाज में अपना स्थान माँगने नहीं गयी, मंच पर खड़े होकर अपने अभावों की मांग पेश करने की आवश्यकता उसे कभी प्रतीत ही नहीं हुई। और न ही विविध संस्थाएँ स्थापितकर उसमें नारी के अधिकारों पर वाद–विवाद करने की उसे आवश्यकता हुई। उसने अपने महत्त्वपूर्ण क्षेत्र को पहचाना था, जहाँ खड़ी होकर वह सम्पूर्ण संसार को अपनी तेजस्विता, नि:स्वार्थ सेवा और त्याग के अमृत प्रवाह से आप्लावित कर सकी थी। व्यक्ति, परिवार, समाज, देश व संसार को अपना–अपना भाग मिलता है– नारी से, फिर वह सर्वस्वदान देनेवाली महिमामयी नारी सदा अपने सामने हाथ पसारे खड़े पुरुषों से क्या माँगे और क्यों माँगे ?

भारतीय नारी हमारी देवी अन्नपूर्णा है। वह देना ही जानती है, लेने की आकांक्षा उसे नहीं है। इसका उदाहरण भारतीय नारी ने धर्म तथा देश की रक्षा में बलिदान हो रहे बेटों के लिए अपने शब्दों से प्रस्तुत किया है। "इस देश–धर्म की रक्षा के लिए यदि मेरे पास और भी पुत्र होते तो मैं उन्हें भी धर्मरक्षा, देशरक्षा के लिए प्रदान कर देती।" ये शब्द उस माँ के थे जिसके तीनों पुत्र– दामोदर, बालकृष्ण व वासुदेव चाफेकर स्वाधीनता के लिए फाँसी पर चढ़ गये।

हर्ष का विषय है कि अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना, अपने अकादमिक एवं संगठनात्मक योजना के अंतर्गत **भारतीय संस्कृति में नारी : अतीत से वर्तमान तक** विषय पर अपना दशम राष्ट्रीय अधिवेशन इस वर्ष 'योजना' एवं मैसूर विश्वविद्यालय के संयुक्त तत्त्वावधान में दिनांक 24–26 दिसम्बर, 2015 ई० तक मैसूर (कर्नाटक) में आयोजित कर रही है। राष्ट्रीय अधिवेशन में देशभर से हज़ारों विद्वान् जुट रहे हैं जो बदलती परिस्थितियों में नारी की भूमिका पर ऐतिहासिक दृष्टि से विचार–मंथन करेंगे। इस दृष्टि से देशभर के विद्वानों से शोध–पत्र आमन्त्रित किए गए हैं, जिनका 'सारांश' (एब्स्ट्रैक्ट) स्मारिका में प्रकाशित किया गया है।

स्मारिका के प्रकाशन में प्रत्यक्ष एवं परोक्ष सहयोग देनेवाले सभी बन्धुओं को 'योजना' हार्दिक धन्यवाद देती है। विज्ञापन एवं अर्थ–संग्रह के कार्य में जुटे वरिष्ठ कार्यकर्ताओं को भी 'योजना' उनके सफल प्रयत्न के लिए बहुत साधुवाद देती है। स्मारिका में विज्ञापन देकर सहयोग करनेवाले महानुभावों एवं संस्थानों के प्रति 'योजना' हृदय से आभार व्यक्त करती है।

इतिहास-पुरुष
॥ नामूलं लिख्यते किंचित् ॥

10वाँ राष्ट्रीय अधिवेशन
अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना
मैसूर (कर्नाटक) : 24-26 दिसम्बर, 2015

प्रकाशन-विभाग
अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना
बाबा साहेब आपटे-स्मृति भवन, 'केशव-कुंज',
झण्डेवालान, नयी दिल्ली-110 055
दूरभाष : 011-23675667
ई-मेल : abisy84@gmail.com
वेबसाइट : www.itihassankalan.org, www.abisy.org

www.facebook.com/akhilabharatiyaitihasasankalanayojana
www.facebook.com/itihasdarpan

© सर्वाधिकार : अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना

प्रकाशन-तिथि : मार्गशीर्ष शुक्ल चतुर्दशी, कलियुगाब्द 5117
(दिनांक 24 दिसम्बर, 2015 ई०)

आवरण-परिचय :
देवी सरस्वती, जलरंग, काग़ज़ पर मैसूर-चित्रकला
चित्रकार : चन्द्रिका
अंतरताने से साभार

आवरण एवं पृष्ठ-सज्जा तथा मुद्रण :
प्रिन्टेक इंटरनेशनल
बी-14, डी.एस.आई.डी.सी. कॉम्प्लेक्स,
झिलमिल इंडस्ट्रियल एरिया, दिल्ली-110 095
दूरभाष : 09582225848, 09811025848

॥ ऋषिका ॥

स्मारिका

अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना : दशम राष्ट्रीय अधिवेशन

मार्गशीर्ष शुक्ल चतुर्दशी-पौष कृष्ण प्रतिपदा, कलियुगाब्द 5117

(दिनांक 24-26 दिसम्बर, 2015 ई०)

भारतीय संस्कृति में नारी : अतीत से वर्तमान तक

सत्यमेव जयते

प्रधान मंत्री

Prime Minister

सन्देश

मुझे प्रसन्नता है कि अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना का दशम राष्ट्रीय अधिवेशन 24 से 26 दिसंबर तक मैसूर (कर्नाटक) में आयोजित हो रहा है, जिसका केन्द्रीय विषय है 'भारतीय संस्कृति में नारी : अतीत से वर्तमान तक'|

इस अवसर पर अधिवेशन के सफल आयोजन के लिए हार्दिक शुभकामनायें।

(नरेन्द्र मोदी)

नई दिल्ली

22 दिसम्बर, 2015

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ

प्रधान कार्यालय : डॉ० हेडगेवार भवन, महाल, नागपुर - 440032.

दूरभाष: (0712) 2723003; 2720150 फैक्स नं. : 2721589; **E-mail :** hedgewarbhavan@rediffmail.com

सरसंघचालक : मोहन म. भागवत सरकार्यवाह : सुरेश (भय्या) स. जोशी

तिथि : कार्तिक शु. १, यु. ५११७ दिनांक : १२.११.२०१५

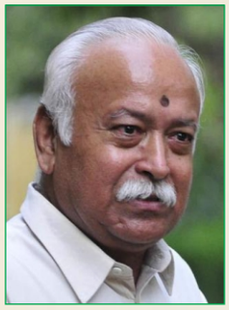

सन्देश

किसी भी राष्ट्र को अपना वर्तमान और भवितव्य भव्य निर्माण करने के लिए अपने सत्य इतिहास का ज्ञान होना आवश्यक होता है। अपने सत्य इतिहास का अनुसंधान कर संकलित करने के कार्य में अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना की महती भूमिका रही है। आनंद की बात है कि संगठन के दशम् राष्ट्रीय अधिवेशन का आयोजन किया जा रहा है।

एक अत्यंत महत्वपूर्ण विषय 'भारतीय संस्कृति में नारी: अतीत से वर्तमान तक' पर केन्द्रित यह अधिवेशन और इस सुअवसर पर 'ऋषिका' का विमोचन दोनो ही समाज जागरण के अपने पुनीत उद्देश्य में सफल हो, इस कार्य में लगे सभी बंधुओं को यही शुभकामना।

(मोहन भागवत)

भारतीय इतिहास अनुसंधान परिषद्

INDIAN COUNCIL OF HISTORICAL REASEARCH

मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार
Ministry of HRD, Govt. of India
35, फिरोज़शाह रोड, नई दिल्ली-110 001
35, Ferozeshah Road, New Delhi-110 001

Phone : 011-23386033, 23384869 (O)
Fax : 91-11-23383421
E-mail : chairperson@inhr.ac.in
Website : www.ichr.ac.in

Professor Y. Sudershan Rao
Chairman

Dt. 21 Nov 2015

MESSAGE

The modern understandings of the origins of Society and State formation are dependent on the Western theories mostly proposed during the enlightened era in Europe. The modern theories are evolved on the basis of imagined societies of the past in the light of empirical analysis of the present. While the imagined societies are unreal, the empiricism changes priorities very frequently. So, the understandings based on such temporal thought process would lead to diversities, complexities and mutual incompatibilities. The liberal thought has led to 'individualism' where every individual will have his/her way in life. Stretching too much of this 'liberalism' will test the elasticity of social harmony. Intellectual speculations on fundamental issues and basic social structures would only destabilize the time tested social institutions in general and marriage institution in particular.

India, which holds the record of unbroken culture since ages unknown, holds the key for the survival of civilized communities continuously over the length and breadth of our country. Our civilization through out has been based on culture. Our culture has emerged from the Vedic thoughtwhich is in turn based on Dharma. This is what we refer as Sanathana Dharma. Thus, Dharma, is not only above religion, it is also the basis for the Veda, according to Mahamahopadhyaya, Dr Sivananda Murtyji. The primary Vedic literatureprofess Dharma, Sutrasdictate Dharma and Epics demonstrate Dharma.

Our ancient literature vouchsafes that Indian social institutions enjoy solid cultural base reinforced by Dharmaunlike modern intellectual propositions.As argued today, the social institutions like marriage,

Home Office : 'Sivananda', # 5-11-643, Vidyaranyapuri, Hanumakonda, Warangal
Telengana State, PIN-506 009 (INDIA)

family, community, tribe, society and state should not be understood as contractual, which could be broken at will. Safety and security of woman is given top priority in all these social institutions by the ancient Indian culture. An individual, man or woman, has to be bound to certain regulations, a code of conduct, for establishing harmony in the society. In a social organization an Individual enjoys restricted freedom.Absolute freedom evokes Jungle law in temporal world.

The original Indian thought is not mind-boggling. It is soul-searching. It explains meaning and purpose of life. It fixes one goal to all and allows wide choice in religious practices. The soul has no gender. But It takes birth as either male or female. They are united as 'one' in marriage. They together pursue one goal thereafter. Common spiritual goal for both is unique toVedicmarriage. Thus, every Indian marriage, irrespective of caste or colour or creed or rituals or family customs, is viewed in terms of the marriage of Goddess Laxmi and Narayana, to be united likeArdhanareeswara (like Siva and Parvati, the primordial couple) and to live in this world as two in one (like Sita and Rama). That is the ideal for the order of the society.

It doesn't mean that all Indian marriages are running on ideal lines, but their short-comings should not be attributed to the concept. The success of these marriages also varies in degrees. We mortals attempt to reach the goal transcending the pit falls. In our life, we may be failing many a time but we continue to struggle to stay on the path since we have to take the system seriously. Marriage institution sustains a healthy society.

The Vedic marriage system is qualitatively different from the marriages of other religious streams or modern social marriages or live-in relationships where both enter into a conditional agreement unless they bind themselves for life. Otherwise,the modern approaches may even take us back to the days of social formation. Gender equality is better served in the marriage system where mutual respect is ensured between the partners.

In fact, in Indian philosophical thought, wife is not only equal to her husband, but even placed higher in the household domain. In family and in marriage, much thought was applied to ensure first her security and primacy. She enjoys central place in the family. Man only revolves round his wife in a limited radius being bound to her and she holding the rope, loosening or tightening, as occasion demands. The Sutra literature deals with do's and don'ts in detail for both men and women. The modern interpretations of the Sutras leading to misunderstandings of the time-tested institutions are conditioned by the present social complexities.

I am sure, the scholarly expositions of very distinguished professors, acharyas, pandits and intellectual giants will throw open the floodgates of knowledge on the status and empowerment of woman in this Conference.

I congratulate Prof Satish Mittalji, the President and Dr Balmukund Pandey, the General Secretary, and the Executive of the Bharatiya Itihasa Sankalana Yojana and elders like Sri Haribhav Vazefor taking up this mammoth academic program for educating all of us on the role of woman in the family, the basic unit of the society, for ensuring social harmony.

Sarve sujana sukhino bhavantu
Sarve Jan sujana bhavantu

Jai Hind

(Y Sudershan Rao)

कहाँ क्या है...

प्रकाशकीय	2
प०पू० डॉ० मोहनराव भागवत जी का सन्देश	3
डॉ० वाई० सुदर्शन राव जी का सन्देश	4

क्रमांक	लेख-शीर्षक	रचनाकार	पृष्ठांक
1.	अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना : एक परिचय	...	8
2.	इतिहास दर्पण : एक परिचय	...	10
3.	**A Numismatic approach to study the status ...**	**Dr. Manmohan Sharma**	12
4.	जैनों में नारी-सशक्तिकरण का आदर्श	डॉ० प्रशान्त गौरव	13
5.	**Position of Women in the age of Upaniṣads**	**Dr. Babita Kumari**	14
6.	**Position of Women in age of Ṛgveda**	**Dr. Budhadeo Prasad Singh**	16
7.	**Role of Women in Ancient Indian Society**	**Ram Sharan Agrawal**	17
8.	प्राचीन से वर्तमान तक भारतीय नारी की स्थिति	अमिता मीना एवं पुष्पा इन्दौरिया	18
9.	**Influence of Globalization on Working Women....**	**Dr. R. Suresha, S.K. Sowbhagya**	21
10.	**Women in Medieval India...**	**Sugandha Rawat & Pradeep Kr.**	22
11.	**Hindu Nationalism and Feminist Perspectives**	**Dr. K. Chanderdeep Singh**	23
12.	**Position of Women in Smṛties**	**Prof. Kamlesh Sharma**	24
13.	**Women in the Epic Age**	**Dr. Bhaskar Roy Barman**	25
14.	**Women in Indian Tradition**	**Dr. Kanchanmala Pandit**	26
15.	**Status of Women: Ancient To Modern Time**	**Dr. Ramshankar Singh**	27
16.	**Reasons for deterioration in the status of Women ...**	**Santosh Kr. Jha**	28
17.	बदलते परिप्रेक्ष्य और भारतीय नारी	डॉ० सारिका कालरा	29

18.	बौद्धयुगीन नारी	डॉ० एकता पाल	30
19.	Role of Women in Charkha-Khadi Movement...	Dr. Sanjay Jha	31
20.	वैश्वीकरण एवं भारतीय नारी	डॉ० पीयूष कुमार एवं डॉ० शिवानी गोयल	33
21.	शस्त्रकला में पारंगत पूर्व-मध्ययुगीन नारी	डॉ० तूलिका बैनर्जी	34
22.	तान्त्रिक देवी छिन्नमस्तिका	निगम भारद्वाज	35
23.	Yanadi Women and Literature	S. Gururaj	36
24.	भारतीय चित्रकला में नारी	डॉ० उमेश कुमार	37
25.	महाकवि कालिदास के साहित्य में नारी	डॉ० कृष्णा प्रसाद	39
26.	Status of Women Education in India	Dr. Jagdishwari Pd. Mishra	40
27.	वैदिक वाड्मय में नारी	डॉ० राजकुमार उपाध्याय 'मणि'	41
28.	नारी :एक साम्राज्ञी व वीरांगना की भूमिका में	प्रो० दिपुबा देवड़ा	42
29.	भारतीय नारी की आदर्श : सीता	सी०ए० मुकेश शर्मा	43
यह मातृभूमि मेरी...		अशोक सिंहल	44
Reception Committee		---	45

॥ नामूलं लिख्यते किञ्चित् ॥

अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना

एक परिचय

यह सर्वस्वीकृत एवं प्रामाणिक तथ्य है कि भारत का इतिहास देश, काल एवं घटना की दृष्टि से खण्डित, विसंगतिपूर्ण एवं विकृत सिद्धान्तों पर आधारित है। यूरोपीय प्रभुत्वकाल में पाश्चात्य मानसिकता से लिखित इतिहास तथ्य, सत्य एवं लेखक— तीनों ही कसौटियों पर अप्रामाणिक, अश्रद्धेय तथा पूर्वाग्रहों से युक्त है। इसलिए स्वाधीनता के पश्चात् सरकारी एवं गैर–सरकारी स्तरों पर इतिहास–संशोधन के अनेक प्रयत्न हुए और हो रहे हैं। इसी कड़ी में भारत के प्रामाणिक एवं भारतीय कालक्रमानुसार सत्यपरक इतिहास पुनर्रचना के लिए संकल्पित समाज–चिन्तक श्री उमाकान्त केशव (बाबा साहेब) आपटे (1903–1972) की स्मृति में कलियुगाब्द 5057 (1976 ई०) में नागपुर में भारतीय इतिहासलेखन, संकलन तथा प्रकाशन आदि की दृष्टि से 'बाबा साहेब आपटे स्मारक समिति' की स्थापना हुई। बाद में 1994 में 'अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना' नामक राष्ट्रीय संगठन दिल्ली में पंजीकृत हुई। इस प्रकार 'योजना' इतिहास के क्षेत्र में कार्यरत विद्वज्जनों का एक राष्ट्रव्यापी संगठन है जो इतिहास, संस्कृति, परम्परा आदि क्षेत्र में प्रामाणिक, तथ्यपरक तथा सर्वांगपूर्ण इतिहास–लेखन तथा प्रकाशन आदि की दिशा में कार्यरत है। देश एवं विदेशों में रह रहे इतिहास एवं पुरातत्त्व के विद्वान्, विश्वविद्यालयों में कार्यरत प्राध्यापक, अध्यापक, अनुसन्धान–केन्द्रों के संचालक, भूगोल, खगोल, भौतिकशास्त्रादि अनेक क्षेत्रों के विद्वान् तथा वैज्ञानिक एवं इतिहास में रुचि रखनेवाले विद्वान् इस कार्य से जुड़े हुए हैं।

उपर्युक्त विचारों की पृष्ठभूमि में अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना ने भारतीय कालगणना के आधार पर महाभारतकाल से लेकर वर्तमान समय तक के इतिहास के पुनर्संकलन का कार्य लिया है। यह पुनर्संकलन सत्य, निष्पक्ष तथ्यों पर आधारित, पूर्वाग्रहरहित, भारतीय कालगणना, आधुनिक वैज्ञानिक अनुसंधानों और नवीनतम पुरातात्त्विक खोजों और समसामयिक वैज्ञानिक व्याख्यात्मक प्रतिमानों के आधार पर हो रहा है। इस प्रकार 'योजना' हमारे देश की सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक, आर्थिक, राजनैतिक तथा जीवन के अन्य सभी पक्षों को दर्शाते हुए हमारे देश के वास्तविक सूत्रबद्धात्मक तथा व्यापक इतिहास का संकलन कर रही है।

इसके साथ ही योजना ने वर्षों से सतत अभियान चलाकर भारतीय–इतिहास में व्याप्त अनेक भयंकर विसंगतियों और त्रुटियों की ओर विश्व का ध्यान आकृष्ट करने के साथ–साथ इतिहास के उन पृष्ठों को भी उद्घाटित करने का प्रयास किया है जो अबतक अज्ञात रहे थे या जिनके सामने आने में अनेक अवरोध उत्पन्न किए जा रहे थे। योजना से जुड़े विद्वान् इतिहासकारों द्वारा उद्घाटित तथ्य, सत्य की कसौटी पर कसे होने के कारण मील के पत्थर सिद्ध हुए हैं और योजना के वैज्ञानिक दृष्टिकोण के कारण इन्हें वैश्विक स्तर पर मान्यता मिली है। विगत दो दशक में भारतीय और विश्व–इतिहास से जुड़े अनेक भ्रामक तथ्यों से निराकरण में योजना को पर्याप्त सफलता प्राप्त हुई है और अनेक में योजना सफलता की ओर अग्रसर है। कुछ मौलिक अनुसंधान, जिसमें योजना ने सफलता प्राप्त की है और जो योजना के द्वारा वर्तमान में प्रकल्प के रूप में चल रहे हैं तथा जिनपर योजना ने पुस्तकें भी प्रकाशित की हैं, इस प्रकार हैं—

'आर्य–आक्रमण सिद्धान्त' का उन्मूलन

योजना का सबसे महत्त्वपूर्ण प्रकल्प 'आर्य आक्रमण सिद्धान्त का उन्मूलन' था। वस्तुतः पाश्चात्य विद्वानों ने भारत के मूल निवासी श्रेष्ठ 'आर्य' जनों को एक जातिबोधक अवधारणा और कल्पित भाषावैज्ञानिक तथ्यों के आधार पर बाहर से आया हुआ स्थापित किया और इसपर इतनी चर्चा चलाई कि देश के बड़े–बड़े राष्ट्रवादी विद्वानों को हिंदुओं के मूलस्थान पर सन्देह हो गया। परिणाम यह हुआ कि सम्पूर्ण भारतीय इतिहास ही 'अभारतीय' हो गया। 'योजना' ने इस सिद्धान्त के उन्मूलन में बड़ा कार्य किया है। 'योजना' की ओर से श्रीराम साठे, डॉ० विष्णु श्रीधर वाकणकर, वी०एन० वराडपाण्डे, मिशेल देनिनो, डेविड फ्राउले, डॉ० शिवाजी सिंह आदि ने प्रामाणिक सन्दर्भ–ग्रन्थों की रचनाकर इस सिद्धान्त को चूर–चूर कर दिया है। योजना की प्रेरणा से जनपद, क्षेत्रीय, प्रान्तीय एवं अखिल भारतीय स्तर पर इस प्रकल्प के लिए कार्यक्रम आयोजित हुए। अब 'आर्य आगमन' के स्थान पर 'आर्य बहिर्गमन' का सिद्धान्त स्वीकृत हो रहा है।

वैदिक सरस्वती नदी शोध–प्रकल्प

'योजना' का दूसरा महत्त्वपूर्ण प्रकल्प लुप्त वैदिक सरस्वती नदी का अन्वेषण है। वेदों, भारतीय–धर्मशास्त्रों और पुराणों में वर्णित विशाल एवं पवित्र सरस्वती नदी को संसार के सभी प्रतिष्ठित विद्वान् स्वीकार करते हैं। कालान्तर में यह अंतःसलिला हो गयी। महाभारत के शल्यपर्व में सरस्वती के तटवर्ती सभी तीर्थों का विस्तारपूर्वक वर्णन है। 'योजना' के इतिहासकारों ने भगीरथ अनुसन्धानों से यह सिद्ध किया है कि वेदवर्णित सरस्वती नदी शिवालिक की आदिबद्री से निकलकर हरियाणा, पंजाब, सिंधप्रदेश, राजस्थान एवं गुजरात होते हुए लगभग 1,600 किमी की दूरी तय करते हुए अरब सागर में गिरती थी और लगभग 1900 ई.पू. में यह अंतःसलिला हो गयी। उपग्रह से लिए गए भूगर्भीय चित्रों के माध्यम से वैज्ञानिकों ने सरस्वती के प्रवाह–मार्ग का मानचित्रण किया है। इसकी एक बड़ी उपलब्धि यह हुई कि ऋग्वेद का काल–निर्धारण सरल हो गया। यह भी प्रस्थापित हो गया कि जिसे हम अबतक सिंधुघाटी सभ्यता मान रहे थे, वह वस्तुतः सरस्वती घाटी सभ्यता है। योजना ने सरस्वती पर अनेक सन्दर्भ–ग्रन्थों का प्रकाशन किया है। सरस्वती पर नित्य नये अनुसन्धान हो रहे हैं और संगृहीत सामग्रियों के आधार पर इतिहास पुनर्रचना का कार्य आगे बढ़ाया जा रहा है।

भारतीय कालगणना वैज्ञानिक एवं वैश्विक

अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना का लक्ष्य है– महाभारतकाल से वर्तमान समय तक अपने देश भारत के इतिहास का संकलन। इसके लिए योजना ने प्रथम चरण में कलियुग की तिथि को मानक बनाया है तथा कलि संवत् (कलियुगाब्द) का प्रचलन प्रारम्भ किया है। 'योजना' ने इतिहास में काल के विशिष्ट महत्त्व को समझकर दो वर्ष सम्पूर्ण देश में कालगणना विषय लेकर इतिहास–दिवसों का आयोजन किया, संगोष्ठियाँ आयोजित कीं तथा अनेक प्रकाशन किए जिनमें वासुदेव पोद्दार की कालजयी रचना *'विश्व की कालयात्रा : कालपुरुष–इतिहास पुरुष'* विद्वानों के बीच विशेष रूप से चर्चित रही है। योजना की यह विशिष्ट उपलब्धि रही है कि उसने वैदिक विद्वानों को इस कार्य में लगाया तथा कालगणना पर अनेक उपयोगी सन्दर्भ–ग्रन्थ प्रकाशित किए हैं। इसके फलस्वरूप सम्पूर्ण देश में भारतीय कालगणना के विषय में जानकारी का वातावरण बना है और 'कलियुगाब्द' का प्रचलन भी प्रारम्भ हुआ है।

महाभारत–युद्ध, गौतम बुद्ध, आचार्य चाणक्य एवं जगद्गुरु आद्य शंकराचार्य की तिथि

पौराणिक कालगणना, महाभारत के अंत:साक्ष्य एवं पुरातात्त्विक उत्खननों से सिद्ध हुआ है कि महाभारत–युद्ध 3139– '38 ई०पू० में हुआ एवं उसके पश्चात् हस्तिनापुर, कोसल और मगध में जो राजा हुए, उनकी सम्यक् वंशावली पुराणों में प्राप्त होती है। महाभारत की इस तिथि से गणना करने पर अजातशत्रु के समकालीन गौतम बुद्ध 1887–1807 ई०पू० में, चाणक्य 16वीं शताब्दी ई०पू० में एवं जगद्गुरु आद्य शंकराचार्य 509–477 ई०पू० में सिद्ध होते हैं। इस कालखण्ड में हुए सभी शासक, महापुरुष आदि सभी की तिथियाँ वर्तमान पाठ्यपुस्तकों में त्रुटिपूर्ण हैं और लगभग 1,300 वर्ष प्राचीन होने की मांग करती हैं। इस त्रुटि के उन्मूलन और 'कालानुक्रम' (क्रोनोलॉज़ी) को व्यवस्थित करने के लिए 'योजना' ने अनेक सन्दर्भ–ग्रन्थों का प्रकाशन किया है और राष्ट्रीय–अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर विद्वानों की सहमति प्राप्त करने का प्रयास कर रही है।

प्राचीन नगरों का युगयुगीन इतिहास

भारतीय नगरों का इतिहास अत्यन्त प्राचीन रहा है। नगरों ने देश के इतिहास को संयोजित एवं संरचित किया है। नगरों के निर्माण तथा नगरीकरण की पाश्चात्य अवधारणा से भारतीय नगरों का इतिहास भिन्न रहा है। भारतीय नगर ज्ञान–विज्ञान, व्यापार तथा लोककल्याणकारी कार्यों के केन्द्र रहे हैं। अतएव योजना ने प्राचीन नगरों के युगयुगीन–इतिहास लेखन का प्रकल्प प्रारम्भ किया है। देश के अनेक नगरों का युगयुगीन इतिहास योजना ने प्रकाशित किया है।

तीर्थ–क्षेत्रों का इतिहास–लेखन

'योजना' ने भारत के तीर्थ–क्षेत्रों का प्रामाणिक इतिहास तैयार कर प्रकाशित करने का वृहत् प्रकल्प लिया है। भारत के तीर्थ सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक एवं जीवन–मूल्यों के संरक्षण के केन्द्र रहे हैं। आद्य शंकराचार्य द्वारा स्थापित चार पीठ आज भी भारतीय सन्त परम्परा के प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। भारत की नदियाँ, पर्वत, देवालय आदि तीर्थों के आधार हैं। इसलिए योजना के प्रयासों से अयोध्या, ब्रज, प्रयाग, काशी, उज्जयिनी आदि अनेक तीर्थों पर प्रामाणिक ग्रन्थों का प्रकाशन योजना की उपलब्धि है जिनके माध्यम से इतिहास, पुरातत्त्व, कला, संस्कृति, धर्म, साधना आदि के अधिकारी विद्वानों को जोड़ा गया है। वस्तुत: भारत का इतिहास तीर्थ–क्षेत्रों के इतिहास से सम्बद्ध है।

सन् 1857 के स्वाधीनता संग्राम पर प्रामाणिक इतिहास लेखन

सन् 1857–'58 ई० के मध्य भारतीयों एवं अंग्रेज़ों के मध्य हुए युद्ध को कई इतिहासकारों ने 'सिपाही विद्रोह' (बग़ावत) की संज्ञा दी है, जबकि 'योजना' का मानना है कि वह केवल एक 'सिपाही विद्रोह' न था, अपितु स्वत:स्फूर्त और देश का अंग्रेजों के विरुद्ध प्रथम स्वाधीनता संग्राम था जिसमें आसेतुहिमाचल पूरे देश ने भाग लिया। इस युद्ध के 150 वर्ष पूर्ण होने पर 'योजना' ने कुरुक्षेत्र में अपना सप्तम राष्ट्रीय अधिवेशन इसी विषय पर आयोजित किया और पूरे देश के सभी ज़िलों, विश्वविद्यालयों में अखिल भारतीय एवं प्रान्तीय स्तर पर संगोष्ठियों का आयोजन किया। 1857 के स्वाधीनता संग्राम पर कई महत्त्वपूर्ण सन्दर्भ–ग्रन्थों का 'योजना' ने प्रकाशन किया है।

भारतीय इतिहासविद्या (हिस्टोरिओग्राफ़ी)

पाश्चात्य इतिहासकारों की मान्यता है कि भारत में इतिहास–लेखन की परम्परा कभी नहीं रही, इसके विपरीत 'योजना' की मान्यता है कि भारत में इतिहास–लेखन की परम्परा और एक विशिष्ट पद्धति रही है और वह 'हिस्ट्री' से नितान्त भिन्न है। पश्चिम में 'हिस्ट्री' और 'प्री–हिस्ट्री' अलग क्षेत्र माने जाते हैं, जबकि भारतीय परम्परा में जो कुछ घट चुका है, वह इतिहास है। हिंदुओं के प्राचीन ग्रन्थों में इतिहास की विपुल सामग्री प्राप्य है और उसमें इतिहासलेखन की विविध प्रवृत्तियों के दर्शन होते हैं। 'योजना' उन प्रवृत्तियों का अध्ययनकर कार्य–योजना निर्धारित कर रही है।

पुराणांतर्गत इतिहास

पुराणों में भारतवर्ष के हज़ारों–लाखों वर्षों का इतिहास सुरक्षित है जिसपर विद्वानों का ध्यान नहीं गया है। योजना' ने पुराणों के इतिहास के एक महत्त्वपूर्ण स्रोत के रूप में स्वीकार किया है और पुराणों के विभिन्न विषयों पर देशभर में राष्ट्रीय, क्षेत्रीय एवं प्रान्तीय स्तर पर अनेक संगोष्ठियों एवं कार्यशालाओं का आयोजन किया है। पुराणों पर विशेष कार्य के लिए 'योजना' ने दिल्ली में भारतीय पुराण अध्ययन संस्थान की स्थापना की है।

जनजातीय इतिहास–लेखन

अनेक इतिहासविदों की मान्यता है कि वर्तमान भारतीय इतिहास की एक विसंगति उसका राजवंशीय आधार है। जबकि इतिहास की सर्वांगीणता में समाज के सभी वर्गों, जातियों तथा युगों का इतिहास सम्मिलित है। वास्तव में भारत का प्रामाणिक इतिहास जन एवं उसकी जातीय परम्पराओं, रीति–रिवाजों एवं जीवन–मूल्यों के इतिवृत्त के साथ ही लिखा जा सकता है। इसलिए 'योजना' ने श्रीराम साठे की स्मृति में हैदराबाद में 'जनजातीय इतिहास केन्द्र' स्थापित किया है। देश के अनेक भागों में जनजातीय इतिहास अनुसन्धान को प्रोत्साहित किया जा रहा है।

जिलों के इतिहास का संकलन

'योजना' का एक प्रकल्प है जिलों के इतिहास का संकलन और प्रकाशन। इस प्रकल्प में जिले के स्थानीय विद्वानों द्वारा स्थानीय स्रोतों के आधार पर अपने जिले का इतिहास, पुरातत्त्व, ऐतिहासिक स्थल, महापुरुष, जिले की सांस्कृतिक, सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति, नदी, तीर्थ, इत्यादि का विवरण संकलन एवं प्रकाशन का कार्य प्रस्तावित है।

॥ नामूलं लिख्यते किञ्चित् ॥

अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना की अर्धवार्षिक शोध-पत्रिका

इतिहास दर्पण

ITIHAS DARPAN

एक परिचय

यह एक प्रसि) तथ्य है कि यदि आप किसी देश पर अपना राज्य स्थापित करना चाहते हैं तो सर्वप्रथम उसके इतिहास को नष्ट कर दें, इस प्रकार उस देश को गुलाम बनाने का कार्य पूरा हो जायेगा। विदेशी शासकों ने हमारे देश को केवल अपना गुलाम ही नहीं बनाया, वरन् हमारे देश के इतिहास को, जो वि] में सबसे पुराना और दीर्घकालीन है, पूर्णत: वि त दिया तथा निराधार तथ्यों से ओतप्रोत कर दिया।

ज़र्मन–लेखक विल्हेल्म वॉन पॉकहैमर द्ध1892–1982ऋ ने अपनी पुस्तक *'इण्डियाज़ रोड टू नेशनहुड : ए पॉलिटिकल हिस्ट्री ऑफ़ द सबकॉन्टिनेंट'* में लिखा है : 'जब मैं भारत का उपलब्ध इतिहास पढ़ता हूँ, तब मुझे लगता ही नहीं कि मैं भारत का इतिहास पढ़ रहा हूँ। मुझे ऐसा लगता है कि मैं भारत पर हुए लगातार आक्रमणों का इतिहास पढ़ रहा हूँ। लगता है कि भारत की पिटाई का इतिहास पढ़ रहा हूँ। भारत के लोग पिटे, मरे, पराजित हुए, यही पढ़ रहा हूँ। इससे मुझे यह भी लगता है कि यह भारत का इतिहास नहीं है।' पॉकहैमर ने आगे लिखा है : 'जब कभी भारत का सही इतिहास लिखा जाएगा, तब भारत के लोगों में, भारत के युवकों में, उसकी गरिमा एकबार आयेगी।'

अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना का यह मूलमंत्रा रहा है कि भारत का इतिहास–लेखन भारतीय दृष्टिकोण से हो। इसके लिए यह आवश्यक है कि भारतीय इतिहास, पुरातत्त्व तथा इतिहास से संबंधित अन्य विषयों, यथा– भूगोल, धर्म और दर्शन, साहित्य एवं भाषाविज्ञान, अर्थशास्त्रा, विज्ञान, समाजशास्त्राादि में ऐतिहासिक दृष्टिकोण से हो रहे शोधों तथा अनुसन्धानों का ज्ञान व परिचय इतिहास के क्षेत्रा और इतिहास में रुचि रखनेवाले बु)जीवियों को हो सके। राष्ट्रीय दृष्टिकोण के प्राच्यविदों के साथ यह समस्या रही है कि उनके शोध–पत्रों का प्रकाशन इतिहास की शोध–पत्रिकाओं में नहीं हो पाता। इस प्रकार राष्ट्रीय दृष्टि से लिखे जा रहे भारतीय इतिहास के विषय में अन्य इतिहासकारों का न तो परिचय प्राप्त हो पाता है और न उनके व्यक्तिगत तौर पर प्रकाशित शोध–पत्रों का उनके कॅरियर और इतिहास के क्षेत्रा को लाभ मिल पाता है। उक्त आवश्यकता की पूर्ति के लिए अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना *इतिहास दर्पण* नामक एक अंतर्राष्ट्रीय स्तर की अर्धवार्षिक शोध–पत्रिका सन् 1993 से

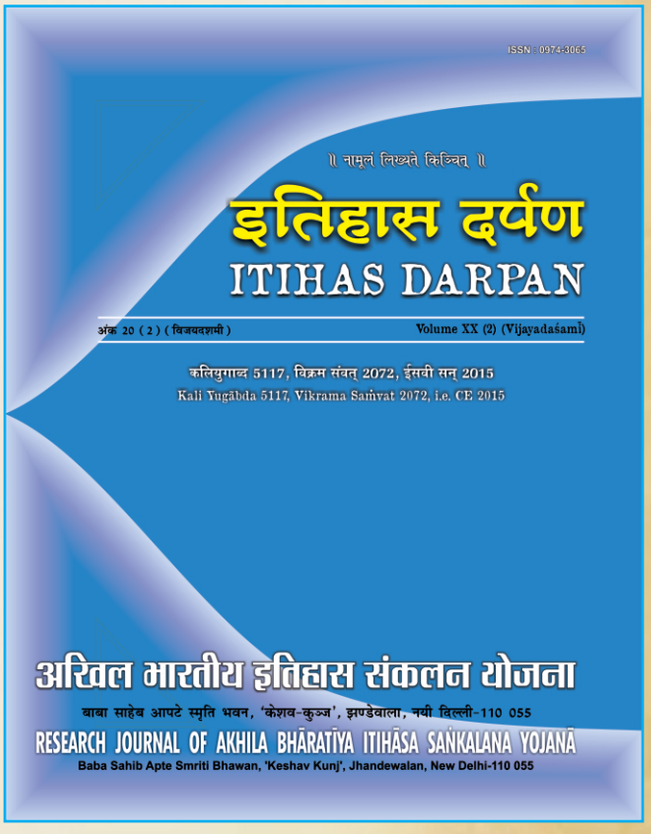

नियमित प्रकाशित कर रही है। आज *इतिहास दर्पण* इतिहास–जगत् में एक ऐसा स्थान बना चुका है जो न केवल अपने देश में, अपितु विदेशों में भी शोध–प्रबन्धों तथा हमारे पक्ष अथवा विपक्ष में लिखी जा रही स्तरीय पुस्तकों में इसे उ)ृत किया जा रहा है। इतिहास के सुधी पाठकों के सहयोग तथा

राष्ट्रीय–अंतर्राष्ट्रीय ख्याति के इतिहासकारों के योगदान के फलस्वरूप *इतिहास दर्पण* ने अपना अंतर्राष्ट्रीय स्थान बना लिया है।

इतिहास दर्पण एक पूर्णरूपेण शोध–पत्रिाका है। यह भारतीय इतिहास के क्षेत्रा में हो रहे नवीनतम शोधों को प्रतिबिम्बित करने के साथ ही भारतीय इतिहास के वि तिकरण का निराकरण भी करती है। सत्य, निष्पक्ष तथ्यों पर आधारित, पूर्वाग्रहमुक्त, आधुनिक वैज्ञानिक अनुसन्धानों और नवीनतम पुरातात्त्विक खोजों के आधार पर लिखे गए शोध–पत्राों का प्रकाशन करती है, साथ ही इतिहास के क्षेत्रा में कार्य करनेवाले विद्वान्, इतिहासकार एवं शोधार्थियों से उनके मौलिक शोधपत्राों के प्रकाशन हेतु सहयोग की भी अपेक्षा रखती है।

इतिहास दर्पण का अंक हिंदू–पंचांग के अनुसार प्रत्येक नववर्ष प्रतिपदा और विजयदशमी को प्रकाशित किया जाता है। इसका प्रत्येक अंक लगभग 160 से 200 पृष्ठों का और बड़े आकार (8०5६ ग 11६) में प्रकाशित होता है। इसमें हिंदी, संस्‌ त एवं अंग्रेज़ी भाषा में शोध–पत्रा प्रकाशनार्थ स्वीकार किए जाते हैं। *इतिहास दर्पण* का सदस्यता–प्रपत्रा इस प्रकार है :

॥ नामूलं लिख्यते किञ्चित् ॥

इतिहास दर्पण
ITIHAS DARPAN

ISSN 0974-3065

(अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना की अर्द्धवार्षिक शोध-पत्रिका)

नियमित रूप से भेजें

मेरी प्रति कुरियर ☐ रजिस्टर्ड डाक ☐ द्वारा इस पते पर प्रेषित की जाए–

नाम : ....

जन्मतिथि : ....

पद/व्यवसाय : ....

पता : ....

....

.... पिन ☐☐☐☐☐☐

दूरभाष/मोबाइल : ....

ई–मेल : ....

आजीवन सदस्यता (15 वर्ष)   व्यक्तिगत ₹ 3,000 ☐   संस्थागत ₹ 5,000 ☐

संलग्न   मनिऑर्डर ☐   चेक ☐   डिमाण्ड ड्राफ्ट ☐

चेक/ड्राफ्ट–क्रमांक......................................, बैंक का नाम..

चेक/ड्राफ्ट **'इतिहास दर्पण'** (**'Itihas Darpan'**) के नाम से निम्नलिखित पते पर भेजें–

अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना

बाबा साहिब आपटे स्मृति भवन, 'केशव-कुञ्ज',

देशबन्धु गुप्त मार्ग, झण्डेवालान, नयी दिल्ली-110 055

दिनांक :..............................   **हस्ताक्षर (सदस्य)..................................**

A Numismatic approach to study the status of women in ancient India

Dr. Manmohan Sharma
Prof. &HOD History, Baba Mastnath University Asthal Bohar, Rohtak
Manmohansharma2005@gmail.com

A study of history of the position and status of women is the best way to understand the spirit of any civilization .Her position and status reflects the development of any society. There are many sources to judge her status like religious and public literature , accounts of the foreigners and the archaeological remains including epigraphs, sculptures , seals , painting and coins .Numismatics forms one of the chief original sources of history and in case of ancient Indian history , the study of coins has undoubtedly proved its immense worth . By making a study of coins we can access the political , social, moral , economic , religious , technical and scientific development of the society with the study of different dynasties, their time period , relations with other societies and extent of the Kingdom etc. We find coins from 6th Century BCE on wards which are made of gold, silver, copper, lead and mixed metals. Fortunately many coins have female figures which include mostly goddesses or deities represented on them. Laxmi, Shasthi, Gauri, Durga, Ambika, Sita, Annapurna, Radha and Vasudhara etc. Sometimes they are found with their consort .Apart from goddesses, the images of some queens on coins are the most important development in our history raising the status of women .They include queen Nagnika of Satavahara dynasty and names of some of other on coins like Gotami, Kosiki etc. Kumar Devi of Gupta dynasty, Somela of Chahaman dynasty and Didda the queen of Kashmir have their coins.

A study of such coins is important in making a judgment of their position . Her religions positions to like part in sacred rites and the ability to donate can be known .Her political status as queen , as ruler or regent and advisor ,can be summed up .The dress , ornaments ,married bliss etc. can be studied .The aim of this paper is to present a study of her status .the finding will be corroborated by other sources .

जैनों में नारी–सशक्तिकरण का आदर्श

डॉ० प्रशान्त गौरव
सह–प्रोफेसर, इतिहास विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सेक्टर 46, चण्डीगढ़

गृहस्थ–जीवन का परित्यागकर जो नारी त्याग व तपस्या के कठिन और दुर्गम मार्ग पर आगे बढ़ते हुए दुःख एवं संघर्षों को सहर्ष स्वीकार करती थी; अहंकार, क्रोध, मान, माया, लोभ को तिलांजलि देकर जैनाचार्यों के अनुसार अपना जीवन व्यतीत करती थी, वह साध्वी कही जाती थी। लेकिन साध्वी–धर्म के विपरीत कुछ महान् नारी विभूतियाँ हुईं, जिन्होंने कला, साहित्य तथा धर्म आदि के विभिन्न क्षेत्रों में महान् उपलब्धियाँ अर्जित कीं। वे नारियाँ समस्त सुख एवं वैभव से विमुक्त होकर इहलौकिक सुखों का परित्याग कर आत्मशुद्धि हेतु महावीर के त्याग के कठिन मार्ग पर चलकर सशक्तिकरण का एक आदर्श प्रस्तुत की थीं।

मिथिला के राजा कुंभा की रानी प्रभावती की पुत्री मल्लि एक प्रमुख नारी थी जिसने कई स्त्रीलोलुप राजाओं को अपनी त्यागमयी मूर्ति की भावनाओं से प्रभावित की। उस प्रबुद्ध नारी ने अपने राज्य पर आए संकट को अपने सांसारिक त्याग का आदर्श प्रस्तुत कर राज्य को विपत्ति से बचा लिया। उसने माता–पिता से आज्ञा लेकर भव्य दीक्षा–महोत्सव के साथ स्वयं दीक्षा ग्रहण की तथा मनः पर्यवज्ञान के साथ–साथ कैवल्य ज्ञान प्राप्त की। यदि धार्मिक दृष्टि से देखा जाये तो तीर्थंकर का पद सर्वोच्च होता है और यह सर्वोच्च पद एक नारी द्वारा सुशोभित किया गया यह न केवल आगम काल का वरन् प्राचीन विश्व–इतिहास का एक अनूठा उदाहरण है। चंदना राजसी सुखों को त्यागकर वह महावीर की प्रथम शिष्या कहलाई तथा सफलतापूर्वक श्रमणी संघ का संचालन किया। उसने अनेक राजा–रानियों, राजकुमारियों उच्च और निम्न–कुल की नारियों को दीक्षा ग्रहण करवायी। चन्दना 36 हजार श्रमणियों की नायिका थी।

मथुरा के राजा उग्रसेन की पुत्री राजमति ने वासनाविहीन प्रेम का आदर्श प्रस्तुत किया। राजमति की अनुपम सुन्दरता के कारण कृष्ण ने इस कन्या के यहाँ जाकर अरिष्टनेमि का विवाह करना स्वीकार कर लिया था किन्तु पशुहत्या से नेमि का हृदय द्रवित हो गया तथा वे वापस लौट गये और उन्होंने दीक्षा ग्रहण कर ली। राजमति ने अपनी 700 सखियों के साथ भगवान् अरिष्टनेमि से दीक्षा ग्रहण की। पद्मावती चम्पा के राजा दधिवाहन की रानी थी जो एक पुत्र की माता होते हुए भी धैर्य का परिचय देते हुए साध्वी बनी एवं अहिंसावादी दृष्टिकोण की मर्यादा के अनुरूप अपने पुत्र को उसके पिता से वास्तविक संबंधों को अवगत कराकर अहिंसा धर्म का पालन किया।

अत्यधिक अनुरिक्त के कारण उदयन ने रानी प्रभावती को दीक्षा की अनुमति नहीं प्रदान की। अतः रानी ने राजसी सुखों का परित्याग करते हुए स्वयं को दण्डित करने के हेतु कठोर साधना कर दीक्षा प्राप्त की। उसने सेवकों के प्रति कभी कोई अन्याय या अमानुषिक व्यवहार नहीं करने की आदर्श प्रस्तुत की।

सुभद्रा की जैन धर्म में दृढ़ आस्था थी। उसने अपने ससुराल में भी अपने पति का धर्म स्वीकार नहीं किया। इसके बावजूद भी वह परिवार के सभी सदस्यों के साथ प्रेमपूर्वक रहती थी, तथा विनम्र व्यवहार करती थी। सुभद्रा ने अपने उपर लगे कलंक को दूर कर साध्वी का जीवन चरितार्थ किया। उत्तराध्ययन 36 से भी ज्ञात होता है कि कृष्ण और राजा श्रेणिक की अनेक रानियाँ– काली, सुकाली, महाकाली, कृष्णा, सुकृष्णा, महाकृषा, वीरकृष्णा, रामकृष्णा पितृसेना, महासेन कृष्णा आदि – भगवती दीक्षा अंगीकार कर संल्लेखना (संथारा) कर अपने शरीर का त्याग किया और सिद्ध गति को प्राप्त किया। पोटिला के लिए दीक्षा की आज्ञा देने से पूर्व पति द्वारा शर्त रखी गई कि 'तुम मृत्यु उपरांत मुझे जैन–धर्म का उपदेश देने का वचन दो, तो मैं तुम्हें दीक्षा की आज्ञा दे सकता हूँ। फलतः पोटिला ने दीक्षा के उपरांत मृत्यु प्राप्त कर अपने पति को पूर्व अनुबंध के अनुसार जैन–धर्म से उद्बोधित किया।

प्रबुद्ध एवं चैतन्य विदुषी रानी कमलावती धन के प्रति अनासक्त भाव रखते हुए राजा को धन से अनासक्त रहने की प्रेरणा देती है। वह भोग का नहीं, त्याग का आदर्श प्रस्तुत करती है।

इस प्रकार की अन्य नारियों में सुलसा, आजीवक मत में श्रद्धा रखनेवाली हालाहला कुम्भकारिणी, जिसके पास अन्तिम समय में गोशालक ठहरा था; जयन्ती; गणिम, धरिम, मेय और परिच्छेद आदि का व्यापार करनेवाली भद्रावती सार्थवाही आदि प्रमुख थीं जिनका आदर्श इतिहास के पृष्ठों पर शतियों से प्रतिष्ठित है। पुरुषप्रधान समाज में संस्कृतियों के नित–नूतन चेतना लेते हुए परिवेश में भी नारी की मेधा, पुरुष से कम नहीं रही है। अतः आगमयुगीन नारी अपनी साधनाप्रधान वृत्ति के द्वारा निश्चय ही सम्मान की पात्र बनी, जिसके आदर्श अब तब श्रावक धर्म में जीवित हैं।

Position of Women in the age of Upaniṣads

Dr. Babita Kumari
(General Secretary, Bhartiya Itihas Sankalan Samiti, North Bihar,
Post Doctoral Fellow, Ph. D., UGC Net, B.Ed, MBA,
e-mail: kumaribabita91@yahoo.in

The Age of the Upaniṣads - The *anuloma* system of marriage ie between the male of a higher caste and female of a lower caste prevailed during this period. The rules of Panini regarding *Abhivādana* (salutation as a mark of respect to elderly persons in the house) show that the presence of wives of the lower caste in a house and their association with ladies of a higher caste brought down the general level of womanly culture and led to a deterioration in their status.

The Gṛhya-sūtras give detailed rules regarding the proper seasons for marriage, qualifications of bride and bridegroom. The various stages of a marriage ceremony are:

* The wooers formally go to the girl's house.
* When the bride's father gives his formal consent, the bridegroom performs a sacrifice.
* Early in the morning of the first day of marriage celebrations, the bride is bathed.
* A sacrifice is offered by the high priests of the bride's family and a dance of 4/8 women takes place as part of the *Indrāni Karman*.
* The bridegroom goes to the girl's house and makes the gift of a garment, mirror to the bride who has been bathed earlier.
* The *Kanyā-pradāna*, formal giving away of the bride takes place now followed by.
* The clasping of the bride's right hand by the bridegroom's own right hand takes place now.
* The treading on stone.
* The leading of the bride round the fire by the bridegroom.
* The sacrifice of the fried grains.
* The *Saptapadi* i.e. the couple walking seven steps together as a symbol of their livelong concord.
* Finally, the bride is taken to her new house.

After the bride came home, the couple is expected to observe celibacy for three days after which the marriage was consummated. The logic was to emphasize at the outset that self-control was very much part of married life.

The bride is at a mature age, over 15 or 16. The elaborate rites indicate that marriage was a holy bond and not a contract.

The women held an honored position in the household. She was allowed to sing, dance and enjoy life. *Sati* was not generally prevalent. Widow Remarriage was allowed under certain circumstances. On the whole the Dharma-sutras take a more lenient attitude than the Smṛtis of a later age. The Āpastamba imposes several penalties on a husband who unjustly forsakes his wife. On the other hand, a wife who forsakes her husband has to only perform penance. In case a grown up girl was not married at a proper time by her father, she could choose her husband after three years of waiting.

The most pleasing feature of this period is the presence of women teachers, many of whom possessed highest spiritual knowledge. The famous dialogue between Yājñavalkya and his wife Maitreyī and Gārgī Vācaknavi show how enlightened the women of that age were. According to the *Sarvānukramaṇikā*, there were as many as 20 women among the authors of the *Ṛgveda*. These stories stand in contrast to the later age when the study of Vedic literature was forbidden to women under the most severe penalty.

Birth of a Daughter Unwelcome – As in all patriarchal societies during that age the birth of a daughter was unwelcome. The son lived with his parents, earned money for the family, protected the family from enemies and perpetuated the name of the family. However, the latter's birth was not considered so bad. One of Upaniṣads recommends a ritual for ensuring the birth of a scholarly daughter. Although it did not become as popular as the one for the birth of a son, it indicates those cultured parents eager for daughters. During this period the daughters could be initiated into Vedic studies and could offer sacrifices to Gods, the son was absolutely not necessary. The importance of ancestor worship by sons led to a decline in the importance of daughters.

The feeling of dejection on the birth of a daughter did not lead to female infanticide in ancient India. This custom crept into India during the medieval period. Once the disappointment on the birth of a daughter was over, the family did not distinguish between their son and daughter.

In subsequent periods, growing incidence of *Sati* meant that parents saw their daughters jumping on to funeral pyres or if she became a widow, live a chaste life since widow remarriage was not permitted. In such an environment to become a daughter's parent became a source of misery.

In the post Vedic period, the professions open to woman in higher sections of society were teaching, medical doctors and business. They suffered from no disabilities in doing business and could even pledge their husband's credit and enter into contracts on their behalf.

Purdah system was not prevalent during this period. There is nothing in our tradition or literature to suggest that the father/elder brother in-law could not see the face of the daughter-in-law as is the case in North India today.

'Man is only one half' says a Vedic passage; he is not complete till he is united with his wife and gives birth to children. The husband is to treat his wife as his dearest friend. The wife is a companion friend of a man, says a Vedic passage. The *Mahābhārata* and Buddhist thinkers concur with this view.

Position of Women in age of Ṛgveda

Dr. Budhadeo Prasad Singh
Principal, M.K.S. College, Chandauna, Darbhanga, Bihar
(A Constituent Unit of L.N.M.U., Darbhanga, Bihar)

The frequent reference to unmarried girls speaks in favor of a custom of girls marrying long after they had reached puberty. Among Aryans, marriage among brothers and sisters was prohibited. There seems to have been considerable freedom on the part of young persons in the selection of their life partners as they generally married at a mature age. Approval of the parent or the brother was not essential, the boy and the girl made up their minds and then informed the elders though their participation in the marriage ceremony was essential i.e. the blessings of the elders were sought.

Surprising as it may sound, in some cases a bride-price was paid by a not very desirable son in law. So also when a girl had some defect, dowry was given. A hymn in the RV gives us an idea of the old marriage ritual. The boy and his party went to the girl's house where a well-dressed girl was ready. The boy catches the hand of the girl and leads her round the fire. These two acts constitute the essence of marriage. The boy takes the girl home in a procession followed by consummation of the marriage.

The wife was respected in her new house and wielded authority over her husband's family. The wife participated in the sacrificial offerings of her husband. Abundance of sons was prayed for so, naturally so in a patriarchal society since the son performed the last rites and continued the line.

There is little evidence to show that the custom of *Sati* existed. Even if known, it was limited to the Kshatriya class. Remarriage of widows was permitted under certain conditions. Female morality maintained a high standard although but the same degree of fidelity was not expected from the husband.

Net women enjoyed much freedom. They took an active part in agriculture, manufacture of bows. They moved around freely, publicly attended feasts and dances.

Role of Women in Ancient Indian Society

Ram Sharan Agrawal
Senior Archæologist. Sitamarhi, Bihar

Indian history writing has, for the past many centuries, focused predominantly on the degenerate nature of Indian society. This was fuelled by the writing of colonial historians who portrayed India as a land ruled by diabolic kings who had no interest in the upkeep of the millions they ruled. The concept of oriental despotism became the heart and soul of western imperialist writing on India. Historians such as James Mill, the celebrated Utilitarian, and Vincent Smith wrote lengthy treatises to prove that Indian society was beyond redemption and that only western political thought and virtue could rid India of all its evils. A more aggressive campaigner of this cause was the evangelist Charles Grant who very often used the word 'uncivilized' to describe Indian society at large. With the advent of Marxism a new, far more dogmatic concept was added to the criticism already espoused so vehemently by these historians.

The idea of the Asiatic Mode of Production was advocated by Karl Marx who spoke of a system in Asia which was stagnant and needed change. A change which could probably be brought about only by the imperialists. For many years, this strand of western political thought dominated history writing. It was only later during the freedom movement that nationalist writers and historians started questioning these presuppositions about Indian society and culture.

The decadent Indian culture which these historians so effortlessly wrote about had in fact been the torchbearer of progressive learning, artistic excellence, political expertise, economic advancement, and social progress in the past. The virtues of Indian culture were, however, brushed aside by imperialist thinkers with a specific agenda in mind; a well thought out strategy which went a long way in ridiculing even the merits of a culture which had once been hailed as the 'cradle of civilization.'

There are several references to women who composed hymns that were included in the Vedic saṁhitās. Even the supposedly orthodox tradition of *Sarvānukramaṇikā* suggests that there were as many as 20 women seers or authors of the *Ṛgveda*. Innumerable instances of women composing hyms and participating in literary activities in Vedic times lends evidence to the fact that the society was upwardly mobile, rather than being stagnant as conceived by western historians. Women litterateurs such as Lopāmudrā, Viśvavārā, Sikata Nivavari, and Ghoṣā contributed immensely to the growth of Vedic literature. It is indisputable that the authors of the 10th book of the *Ṛgveda* verses 145 and 159 were women. Therefore, the supposed alienation of women was merely a fabricated hypothesis put forth by western historians under the imperial regime and picked up later by Marxist historians as a means of tarnishing the glorious past of India in which women had a great role to play since genesis of civilization. In fact, in the early Vedic period it was mandatory for women belonging to the three upper castes to undergo the *upanayan* or investiture ceremony before taking formal education. If it wasn't for the notion of equality between the two genders, the privileges enjoyed by men would not have been granted to women.

प्राचीन से वर्तमान तक भारतीय नारी की स्थिति

अमिता मीना एवं पुष्पा इन्दौरिया
व्याख्याता, राजनीतिविज्ञान विज्ञान, गौरी देवी राजकीय कन्या महाविद्यालय, अलवर (राजस्थान)

मानव सभ्यता एवं सामाजिक विकास का मूल स्रोत नारी है। सृष्टि के विकास–क्रम में नारी का स्थान महत्त्वपूर्ण रहा है। नारी संसार की जननी है, वह जन्मदात्री है। मानव जीवन की रसधार उसी पर आधारित है। वात्सल्य, स्नेह, कोमलता, दया, ममता, त्याग, बलिदान–जैसे आधार पर सृष्टि खड़ी है। ये सभी गुण एकसाथ नारी में हैं।

यदि किसी संस्कृति को समझना हो तो हमें उस संस्कृति में नारी को समझना होगा। क्योंकि नारी समाज के सांस्कृतिक चेहरे का दर्पण होती है। नारी समाज का अभिन्न अंग है। नारी का स्थान समाज में सर्वोपरि रहा है। किसी सभ्यता को समझने का सर्वोत्तम आधार स्त्रियों की दशा का अध्ययन करना है। हिंदू–सभ्यता में स्त्रियों को अत्यन्त आदरपूर्ण स्थान मिला। 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता:' — हमारी संस्कृति का आदर्श रहा है।

'नारी' शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग *ऋग्वेद* में प्राप्त होता है जिसका अर्थ 'याज्ञिक' लिया गया है। प्रागैतिहासिक युग नारी के उत्थान का युग रहा है। इस युग में नारी पूर्ण रूप से स्वतन्त्र थी, उसे सभी अधिकार प्राप्त थे। वैदिक युग में आदरपूर्ण स्थान के साथ नारी की स्थिति शिक्षा, विवाह, सम्पत्ति आदि सभी दृष्टिकोणों से पुरुषों के समान थी। स्वर्णिम और गौरवशाली युग में नारी को शक्ति, ज्ञान, धन का प्रतीक माना जाता था। पिता विदुषी व योग्य कन्याओं की प्राप्ति के लिए विशेष धार्मिक कृत्यों का अनुष्ठान करते थे। *ऋग्वेद* में विदुषी तथा दार्शनिक स्त्रियों के नाम मिलते हैं जिन्होंने कई मन्त्रों एवं ऋचाओं की रचना की थी। विश्ववारा, घोषा, लोपामुद्रा, शाश्वती, अपाला, इन्द्राणी, सिकता, निवावरी आदि विदुषी स्त्रियों के कई नाम मिलते हैं जो वैदिक तथा श्लोकों की रचियता रहीं।

उत्तरवैदिक युग में नारी की स्थिति में गिरावट आयी। कन्याओं को गुरुकुल में शिक्षा प्राप्त करने के अधिकार से वंचित कर दिया गया। उनके धार्मिक अधिकार कम हो गये। पर विवाह वयस्क होने पर तथा वे अपना पति स्वयं चुनती थीं। *शतपथब्राह्मण* के अनुसार गृहकार्यों एवं उत्तरदायित्वों के निर्वाह में स्त्री पुरुष की समान भागीदार होती थी।

यज्ञों के अवसर पर मन्त्रों के गायन का कार्य पत्नी ही करती थी। उपनिषद्–काल में दार्शनिक महिलाएँ थीं— मैत्रेयी, गार्गी, अत्रेयी। गार्गी ने तो उस समय के प्रख्यात दार्शनिक याज्ञवल्क्य से राजा जनक की सभा में गूढ़ दार्शनिक प्रश्नों पर वाद–विवाद किया।

सूत्रकाल में स्त्रियों की दशा पतनोन्मुख हो गयी। इस काल में स्त्रियों की स्वतन्त्रता पर प्रतिबन्ध लगाया गया।

स्मृतियुग तक स्त्रियों पर अनेक प्रतिबन्ध आरोपित कर दिये थे। वेदाध्ययन, धार्मिक संस्कार, विधवा–विवाह तथा स्वतन्त्रता पर पाबन्दी लगाने से स्त्रियों की स्थिति निम्न से निम्नतर होती गयी। बालविवाह होने से शिक्षा से वंचित हो गयी और पति की सेवा को उनका परम कर्त्तव्य बताया गया।

दूसरी शताब्दी ईसा पूर्व से तीसरी शताब्दी ईसवी तक का समय उत्तरी भारत में विदेशी आक्रमण के काल ने स्त्रियों की दशा को प्रभावित किया। पुनर्विवाह की प्रथा बन्द हो गयी तथा सती प्रथा का प्रचलन हुआ। इसके साथ ही जहाँ वैदिक काल में स्त्रियों को सम्पत्ति सम्बन्धी अधिकार प्राप्त नहीं थे, वहीं इस काल में उनको मान्यता मिली। बाबर एवं मुग़ल–साम्राज्य के इस्लामी आक्रमण के साथ और इसके बाद ईसाइयत ने महिलाओं की आज़ादी और अधिकारों को सीमित कर दिया।

मध्ययुग में भारतीय महिलाओं की स्थिति निम्नतर होती गयी। इस युग में मुस्लिम आक्रांताओं से हिंदू–धर्म की रक्षा के लिए स्त्रियों के सतीत्व तथा रक्त की शुद्धता बनाए रखने के सन्दर्भ में नियमों को कठोर बना दिया गया। नारी का स्वतन्त्र अस्तित्व समाप्त हो गया। उसे सभी अधिकारों से वंचित कर दिया गया। उन पर व्यक्तिगत कानून तथा धार्मिक प्रथाएँ लागू कर दी थीं। सती–प्रथा, बालविवाह, विधवा–पुनर्विवाह पर रोक, पर्दा–प्रथा समाज का अंग बन गयी। इन परिस्थितियों के बावजूद भी कुछ महिला राजनीति, साहित्य, शिक्षा और धर्म के क्षेत्र में सफल हुई। जैसे रजिया सुल्तान, गोण्ड की महारानी दुर्गावती, चाँद बीबी, नूरजहाँ, अहिल्याबाई होल्कर आदि ने राजशाही शक्ति का प्रभावी रूप से प्रयोग किया।

भक्ति–आन्दोलन ने महिलाओं की स्थिति को सुधारने का प्रयास किया। इस युग की सन्त कवयित्रियों में मीराबाई, अक्क महादेवी, रानी जानाबाई और लालदेद थीं। 12वीं शती आते–आते सम्पूर्ण देश में विधवा के मृत पति के उत्तराधिकारी होने का सिद्धान्त स्वीकार कर लिया गया। किन्तु जीवन के अन्य क्षेत्रों में उसकी दशा दयनीय ही रही। इस शती तक कुलीन परिवार की कुछ कन्याएँ साहित्य की शिक्षा ग्रहण करती थीं।

मुस्लिम सत्ता की स्थापना के साथ ही समाज में पर्दा–प्रथा का प्रचलन हुआ और स्त्रियों का कार्यक्षेत्र घर तक सीमित रह गया। बहुविवाह का प्रचलन हुआ। कुछ भागों में देवदासी–प्रथा प्रचलित हुई। स्त्रियों पर व्यक्तिगत क़ानून तथा धार्मिक प्रथा लागू कर दी गयी थी। हिंदू–धर्म की रक्षा के लिए स्त्रियों के सतीत्व तथा रक्त–शुद्धता बनाए रखने के सन्दर्भ में नियमों को कठोर बना दिया। इसके अलावा कुछ व्यक्तिगत प्रयास भी हुए जो स्त्री सुधार आन्दोलन में मील का पत्थर साबित हुए।

आधुनिक भारत में समाज सुधार की दिशा में प्रथम पहल राजा राममोहन राय ने की। इन्होंने 1828 में ब्रह्म समाज की स्थापना की। यह पारम्परिक हिंदू–धर्म में सुधार के लिए आन्दोलन था। इसने हिंदू–धर्म के जड़वादी एवं दुराग्रही उपबन्धों पर प्रहार करना प्रारम्भ किया इसने स्त्री–सुधार व स्त्री–शिक्षा पर बल दिया। इसके प्रयास से 1829 में तत्कालीन वायसराय द्वारा सती–प्रथा का उन्मूलन के लिए क़ानून पारित किया। स्त्रियों के लिए 'बाम बोधिनी' नामक पत्रिका का प्रकाशन प्रारम्भ किया। 1872 में सिविल मैरिज एक्ट पास किया गया। इसी प्रकार 1867 में डॉ. आत्माराम पाण्डुरंग द्वारा प्रार्थना सभा की स्थापना हुई। इसके अंतर्गत बॉम्बे वीमेन रिफॉर्म एसोसिएशन की स्थापना की। पहला महिला विश्वविद्यालय बम्बई में 1916 में आर.जी. भण्डारकर तथा एम.जी. चन्द्रावरकर द्वारा किया गया था। इसने स्त्री–शिक्षा पर जोर दिया। आर्य समाज धार्मिक जागरण द्वारा समाज सुधार करनेवाला आन्दोलन रहा। स्त्री–सुधार के लिए शिक्षा, क़ानून द्वारा बालविवाह–निषेध, बाल–विधवा पुनर्विवाह का समर्थन आर्य समाज द्वारा किया गया। इसने वैदिक प्रसंगों के तार्किक व्याख्या द्वारा प्राचीन भारत में स्त्रियों की उच्च स्थिति का जो शानदार चित्रण किया, उससे समाज में स्त्री पुनरोद्धार के प्रति व्यापक जागरुकता का प्रसार हुआ।

मुस्लिम स्त्रियों में भी सुधार आन्दोलन 19वीं शती के उत्तरार्द्ध में प्रारम्भ हुए। भोपाल की बेगम सैय्यद अहमद खान, अलीगढ़ के शेख अब्दुल्ला तथा लखनऊ के करमत हुसैन ने विभिन्न आन्दोलन चलाये। 1916 ई. में बेगम सैय्यद अहमद ख़ान ने 'अखिल भारतीय मुस्लिम स्त्री सम्मेलन' की स्थापना की।

स्त्रियों की दशा सुधार में कुछ व्यक्तिगत प्रयास भी हुए थे। 1819 ई. में कुछ ईसाई मिशनरियों द्वारा कलकत्ता में 'कलकत्ता तरुण स्त्री सभा' की स्थापना की गई। 1849 में जे.ई.डी बेटन ने कलकत्ता में एक बालिका विद्यालय स्थापित किया और प्रो. धोंडो केशव कर्वे ने 1899 में एक विधवा आश्रम स्थापित किया। पण्डिता रमाबाई रानेडे ने भी 'पूना सेवा सदन' नाम से एक पृथक् विधवाश्रम की स्थापना की।

ईश्वरचन्द्र विद्यासागर भी स्त्री–शिक्षा एवं विधवा–पुनर्विवाह के लिए आजीवन प्रयत्नशील रहे। उन्होंने 25 बालिका स्कूलों की स्थापना की। उन्होंने स्त्रियों की उच्च शिक्षा की प्रगति में भी सहयोग दिया। 1856 में उन्होंने विधवा–पुनर्विवाह कानून बनवाया। भारत में पहला कानूनी विधवा विवाह कलकत्ता में 07 दिसम्बर, 1856 को इन्हीं की प्रेरणा एवं देखरेख में सम्पन्न हुआ।

आन्ध्रप्रदेश में कण्डकरी वीरेसलिगम ने स्त्री–शिक्षा एवं विधवा–विवाह के लिए वही कार्य किया जो बंगाल में ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ने किया। अपनी पत्रिका 'विवेकवर्धन' में विभिन्न लेख तथा 'ब्रह्मविवाहम्– 'जैसे नाटक के माध्यम से उन्होंने अनेक कुरीतियों को दूर किया।

1897 में मद्रास, 1905 में राजमुन्दरी में विधवा–आश्रम का निर्माण उन्होंने करवाया। 1883 में 'साथीहितबोधिनी' नामक मासिक पत्रिका का प्रकाशन कर स्त्री–हितों के संवर्धन के लिए कार्य किया। उन्होंने देवदासी प्रथा तथा वेश्यावृत्ति का विरोध किया।

राष्ट्रीय आन्दोलन के दौरान स्त्रियों ने स्वदेशी आन्दोलन, असहयोग आन्दोलन एवं सविनय अवज्ञा आन्दोलन में भाग लिया। 20वीं शती के प्रारम्भ में स्त्रियों के द्वारा अनेक महिला संगठन की स्थापना की गई। 1917 में एक आयरिश महिला मारग्रेट कर्जन द्वारा वीमेन इण्डियन एसोसिएशन की स्थापना की गयी। 1926 ई. में नेशनल काउंसिल ऑफ़ इण्डिसन वूमेन स्थापित की गयी। 1927 में स्थापित 'अखिल भारतीय महिला सभा' ने इस दिशा में सराहनीय प्रयास किया।

इन महिला–संगठनों की स्थापना से स्त्री–मुक्ति आन्दोलन की प्रक्रिया एक तरफ काफी तेज हुई तो दूसरी तरफ आन्दोलन में ढाँचागत परिवर्तन भी आये। अब राजनीतिक अधिकारों की माँग भी की जाने लगी। 1917 में पहली बार स्त्रियों को वोट डालने के अधिकार की माँग भी उठाई गई। इस हेतु महिलाओं का प्रतिनिधि–मण्डल अपने राजनीतिक अधिकारों की माँग के लिए विदेश सचिव से मिला, जिसे भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस का समर्थन था। 1919 के संवैधानिक सुधार में इसे स्वीकार भी किया गया। मद्रास ऐसा पहला प्रान्त था जिसमें स्त्रियों को वोट डालने का अधिकार मिला। इसके बाद विधायक के चुनाव में भी स्त्रियों ने मत दिया। 1927 में मदास में डॉ. मधु लक्ष्मी रेड्डी विधायक बननेवाली पहली महिला थीं। श्रीमती एनी बेसेन्ट भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस की अध्यक्ष बनीं। इनके बाद सरोजिनी नायडू को भी यह सौभाग्य प्राप्त हुआ। मुहम्मद अली जिन्ना के कार्यों के फलस्वरूप 1929 में बालविवाह निषेध अधिनियम पारित हुआ। स्त्रियों ने किसान आन्दोलन एवं ट्रेड यूनियन आन्दोलन में भी बढ़–चढ़कर हिस्सा लिया। 20वीं शती के आरम्भिक दशकों में स्त्री–आन्दोलन में नवीन प्रवृत्तियाँ उभरने लगी थीं।

स्त्रियों को राजनीतिक क्षेत्र में लाने का प्रथम श्रेय महात्मा गाँधी को ही है। उन्होंने सभी स्त्री सुधारों को जारी रखा। गाँधी जी ने स्त्रियों को राजनीतिक आन्दोलन में शामिल करने पर जोर दिया। स्त्री–आन्दोलन को नवीन आयाम प्रदान करने में नेहरू जी के विचारों ने भी भूमिका निभायी। स्वतन्त्रताप्राप्ति के बाद भी भारत सरकार द्वारा स्त्री–सुधार की दिशा में संवैधानिक प्रयास किया गया। अधिनियम सामाजिक परिवर्तन के लिए प्रेरक कारक साबित हो रहे। स्त्रियों की कुछ आधुनिक समस्याओं के समाधान हेतु भी कानूनी एवं व्यवस्थात्मक प्रयास किए गए हैं। वैसी भी 19वीं 20वीं शती में स्त्री–सुधार के सम्बन्ध में जो मूल मुद्दे थे। वर्तमान समय में एक–दो उदाहरणों को छोड़ उनका लगभग पूर्ण उन्मूलन हो चुका है। इसलिए अब स्त्री आंदोलन का स्वरूप भी स्त्री के नवीन समस्याओं के अनुसार बदल रहा है। वैसे भी विभिन्न स्त्री–आंदोलन एवं व्यापक सरकारी प्रयासों के कारण स्त्रियों की स्थिति दिन–प्रतिदिन सुधरती जा रही है, लेकिन स्त्रियों के जो मुद्दे थे, उनका स्वरूप और मौलिक कारण आज बदल गए हैं। आज लिंग–विषमता भी एक प्रमुख मुद्दा रह गया है। स्त्रियों की नवीन समस्याएँ नवीन रूप में भी सामने आती हैं। आज भी साक्षरता अधिकार एवं समानता के सन्दर्भ में पुरूषों की तुलना में स्त्रियों की स्थिति निम्न है, पर इस समस्या का समाधान भी खोजा जाना ज़रूरी है। आज नारी जागरण की आवश्यकता न केवल नारी को है, वरन राष्ट्र, समाज और मानवता के उत्थान तथा कायाकल्प का मार्ग भी यही है। नारी–जागरण से ही विश्व और सुन्दर भविष्य का सुदृढ़ आधार बन सकता है। वर्तमान समय में नारीवाद एक जीवन्त एवं परिलक्षित सामाजिक आन्दोलन है।

नारी की वर्तमान स्थिति समाजीकरण का ही परिणाम है। नारी उत्थान की दिशा में क़ानून–निर्माण और प्रशासन को तो कार्य करना ही है। सबसे महत्त्वपूर्ण बात समाज की सोच, समाज की व्यवस्था में बदलाव और नारी जीवन, स्वयं अपने जीवन के सम्बन्ध में स्वयं नारी की सोच में बदलाव आया है। प्रत्येक क्षेत्र में महिलाओं को पुरुषों के बराबर स्थान प्राप्त हो। यह पुरुष की सामन्ती मानसिकता और पुरुषवाद के विरुद्ध एक विद्रोह एक आन्दोलन है।

इन सबके बाद भी वर्तमान में नारी का सफ़र चुनौतीभरा है, लेकिन उनसे लड़ने का साहस भी उनमें आया है। आज नारी आर्थिक और मानसिक रूप से आत्मनिर्भर है। कल तक जो भावनात्मक रूप से कमज़ोर थी, वह आज आत्मनिर्भर बन रही है। महिलाओं ने अपनी क्षमताओं के बल पर पुरुषों को पीछे छोड़कर समाज एवं परिवार में अपनी अलग पहचान बनाई है। वर्तमान समय में नारी जागरण को अत्यधिक गति मिली है। आज सभी क्षेत्रों में नारी सम्मानित हुई है। शिक्षा और आर्थिक स्वतन्त्रता ने नारी को नया रूप नयी चेतना दी है।

इक्कीसवीं शती महिलाओं के लिए खोई हुई गरिमा व प्रतिष्ठा प्राप्त करने के लिए, समाज के उत्थान में सशक्त भूमिका निभायेगी। आधुनिक नारी को अपना स्वाभिमान की रक्षा करना आता है उसे समाज में अपनी स्थिति का ज्ञान है वह शोषण से मुक्ति पाने की कोशिश कर रही है। आज नारी–जीजिविषा के चलते वर्तमान सामाजिक सन्दर्भ में उसका अबला रूप निश्चित ही बदल चुका है। नारी सबल हो रही है, ऊर्जावान् बनी और यह नारी की स्थिति में क्रान्तिकारी परिवर्तन है।

Influence of Globalization on Working Women In India

Dr. R. Suresha
Post-Doctoral Fellow, Department of Sociology, Bangalore University
S.K. Sowbhagya
Research Scholar, Dept. of Political Science, Bangalore University

It is possible because of the Globalization that the companies are entertained into India in order to fulfill their Business. It is a positive indication that it provides employment not only for the Indian Men but also women. This is an opportunity for the women to improve their self-confidence and more over to say, these days Women are paid higher than the Men due to their capacities. Thus, they enjoy the Right to Social and Economic Equality. Out of the total 397 million workers in India, 123.9 million are women and of these women 96% of female workers are in the unorganized sector. Accordingly, although more women are now seeking paid employment, a vast majority of them obtain only poorly paid, unskilled jobs in the informal sector, without any job security or social security. The major problem faced by the female workers is Job Security which leads them to psychological stress. It has become a dire need for the woman to work along with the men in the family in order to support the basic needs of the children/other family members. One of the evils of the modern society is the sexual harassment of women especially the female workers as they are harassed not only by the family members but also by the male colleagues in the work place. During the recent years, instances of desertion and divorce are increasing making the lives of many women very miserable. These incidents of desertion are too many these days as the women working are busy with their work culture and not in a position to pay much attention and affection to the husband because of the stress. The concept of Globalization has got its severe impact on all categories of the society but it is a bit more on the women who are working. they have to balance between their domestic and professional responsibilities, they are under pressure as it finally leads them to severe diseases. It is also said to be a cause for the desertion and divorce. This is how the word Globalization influences the women in India.

Women in Medieval India : Conflicting Images Parallel Lives

Sugandha Rawat
Dr. Pradeep Kumar
Assistant Professor, Satyavati College (Evening), Delhi University

The cultural history of India bears testimony to the fact that theoretically women have been accorded the status of devi (Goddess) in our country. In Hindu religion God is shown as *'ardhanārīśvara'* or 'God who is half woman'. Though it is commonly agreed upon that high status of women of the early Vedic period went on to deteriorate during the succeeding ages. The freer Vedic women became more and more dependent on their male counterparts and were oriented towards a restricted life. Deterioration in women's condition is apparent in all periods following 1500 BCE and became most visible in the wake of the Muslim invasion and occupation of our country during the12th century.

The Medieval period (11th century-18th century) marked a new low in the role and status of women in India. Evil practices like *sati*, child marriage, female infanticide, *devadāsī* and purdah system adversely effected women's condition. Owing to Muslim influence purdah was strictly followed which further restricted women's free movement and confined them within the four walls of home. The birth of daughter came to be regarded as a curse and with their education getting almost banned women came to be regarded as meager tools of pleasure for men with no intellectual merit and decision making power. Though the medieval period produced many female heroes like Razia Sultan, Rani Durgavati, Mirabai, Andal, Akka Mahadevi, Nurjahan, Jijabai, Ahilya Bai Holkar etc who shaped their times in various capacities but these were exceptions rather than general rule.

When the batons of power changed hands from Mughals to the British in the mid 18th century the general condition of women in India was alarmingly distressing. In the beginning of their relationship with India, the British adopted non-interventionist attitude towards the socio-cultural milieu of the country, this continued till 1813 yet positive though reflexive British influence was felt on diverse areas like caste system, condition of women, education etc.

The medieval age (11th-18th century) indeed was the darkest phase in Indian women's life and this was not specific to a singular religion, caste or region. Through the present paper it is attempted to discuss women's condition in India in the medieval context and to know that why and when the daughters of emancipated Vedic *Brahmavadinis* came to be physio-psychologically schooled to consider themselves as non-competitive and inferior to men, trained to be only good wives and mothers thus ignoring their mental capabilities and multi-tasking skills by limiting both their roles and choices in life.

Hindu Nationalism and Feminist Perspectives : A Critique

Dr. K. Chanderdeep Singh
Asstt. Professor and Head of Department Historical Studies,
Jawaharlal Nehru Rajkeeya Mahavidyalya,
Port Blair, Andaman & Nicobar Islands (UT)

Nationalism is a phenomenon which invites strong reactions from its antagonists as well as protagonists. In modern Indian context the Hindu nationalism has managed to establish itself as a strong cultural and political philosophy embarking upon a definite set of belief systems wherein the conception of strong and masculine Hindu Rashtra is seen as an ultimate goal. The narrative that has set in the present times among the ideologues of Hindutva as well its detractors offers curious insights into the practices and preaching's of both. The contest over the role of feminine in social, economic and political spheres has inadvertently intertwined the Indian women in the nationalist discourse. The Indian feminist scholars like Urvashi Butalia, Tanika Sarkar, Kumkum Sangari, Kamala Bhasin, Sikata Banerjee and many of their ilk have constantly waged an academic campaign bordering on stigmatization against the forces of Hindu nationalism. Some of their criticisms justifiably validates the patriarchal setup of the Hindu social system and all the negativity that it beholds in its wake. However, without contesting the scholarship of the Indian feminists, certain pertinent questions need to be posed and understood. Why they are selective in targeting the Hindu nationalist forces? Why deafening silence in case of other communities viz. Muslims and Christians? Why lowering of benchmarks and going liberal when it comes to the case of minorities? Apart from the issues that afflict the Indian feminists , there is a parallel though not very strong, stream of Hindu feminism which overtime may offer a viable alternative to the established feminist discourse. It is an opportune time when the feminist perspective on Hindus as social commonwealth and Hinduism as a religious conglomerate which so far has been guided by a particular ideology should undergo an objective review and questioning. The present article is an introductory attempt to look into some of the set clichéd judgments pertaining to the study of Indian (Hindu) women through the non - feminists lens.

Position of Women in Smṛties

Prof. Kamlesh Sharma (Bhardwaj)
HOD, Dept. of History and Culture and Tradition,
Vardhaman Mahaveer Open University, Kota
e-mail : kamleshsharma@vmou.ac.in, Kamlesh_0444@yahoo.com

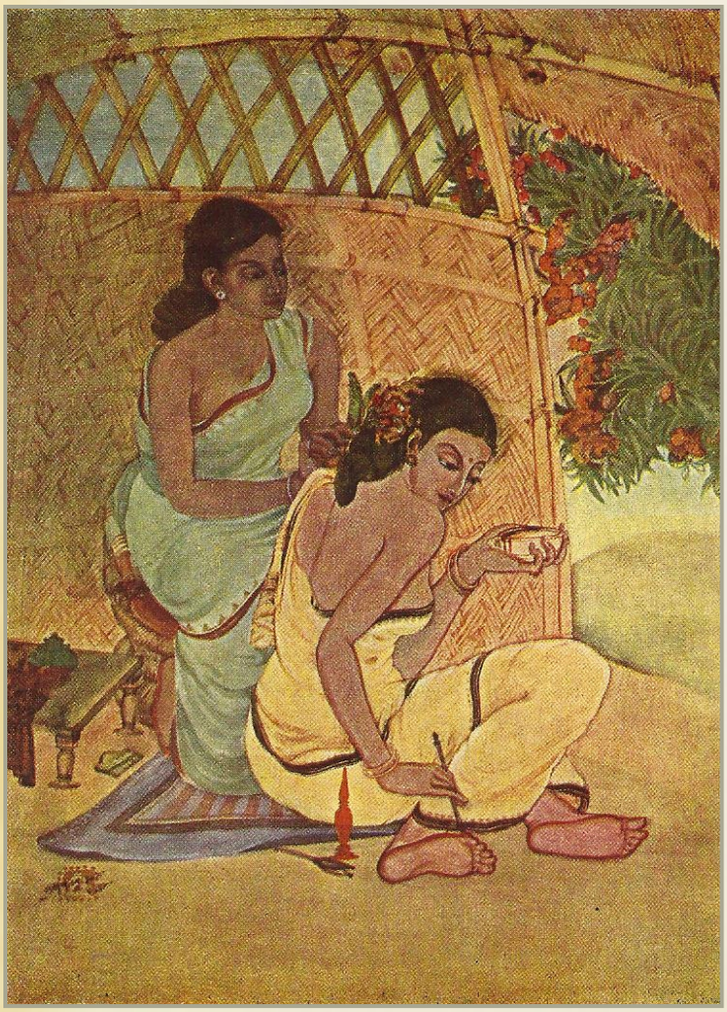

Smṛti literature of India are valuable literary heritage which have immense significance in history writing. These are good source of not only religious and cultural history but also social, political, economical, Ayurvedic and environmental history of ancient India. Social changes, values, faiths etc. may be traced in Smriti literature. Smṛties have incorporated the changes of ancient society. Smṛties deal with every aspect of human life and relevant to our present day scenario and problems. Main Smrities are twenty but five (Manu, Yājñavalkya, Nārada, Bṛhaspati and Kātyāyana) are important.

The proposed research paper examines women's status in Smṛties through different dimensions and sums up the attitudes of Smṛti-writers. The main sources of this research paepr are original texts and secondary works. The paper concludes that in spite of deterioration of women's position, Smṛti-writers favour for her bread and butter and her *Strīdhana.* Women's right is property was accepted by Yājñavalkya. He seems more sympathetic towards women than Manu.

Women in the Epic Age

Dr. Bhaskar Roy Barman
South Bank of Girls Bodhjung Dighi, Itakhola Road, Banamalipur
Middle Agartala-799 001, West Tripura

The *Rāmāyaṇa* and *Mahābhārata*, the two epics that India prides itself on, are universally accepted as the pillars of the Hindu religion. These two epics, that is,, these two literary works , that have come down through the ages to the present age have moulded and guided the people professing the Hindu religion. Even today children are wont to fall asleep, listening to their grandmothers or mothers tell them the story of Rāma and Sītā, of their endurance and suffering and their courage and heroism. Though these epics are read and venerated as religious works, they possess excellent literary richness and many literary practitioners approach them from a literary perspective. We should bear in mind in this context that the Vedic era when Hinduism emerges as the leading religion in South-East Asia preceded the period in which the two epics were written. The leap from one era over long space of time to another era accounted for the effecting of the change in religious thought, the transformation of the ideals held dear in the preceding era into the ideas espoused in these epics, particularly with regard to women, their status in the family and in the society. The two epics tell of how women faced the situation pressed down upon them.

During the leaping of time from the Vedic age through the ages down to the modern age Indian womanhood has been subjected to different phases of transformation, both radical and ephemeral. The pressures made to stay put on them have been varied with cancelling effects. The melting pot of the female Indian psyche has been undergoing a constant fluxion of internal change and transformation owing to the thronging from all sides of the multifarious socio-economic and psycho-spiritual ingredients to keep on this process of changing. Because this process of changing the female psyche brews a new self-image taking on itself the fascinating hues of freedom, self-respect, self-worth, confidence and allied attributes , it is required to be savvied of in terns of neo-historicism and, thus, calls forth an examalysis of the historical data relating to Indian womanhood. This engenders idiosyncrasies and vicissitudes that have been constructing and deconstructing the evolving image of the average Indian woman.

The essence of the Aryan civilization is embalmed in the four Vedas, namely, Ṛk, Yajuṣ, Sāma and Atharva and in the Brahmanas and the Upanishads, their branches. Since we do not have, available on hand, any archæological or historical evidence till about 300 BCE we have to locate in the Vedic literature the Indian social, political and religious history. For the sake of historical accuracy the Vedic age has been divided into two Vedic ages: The Early Vedic age, or Ṛgvedic age which begins in 1500 BCE and the post-Vedic age spanning a period between 1000 BCE and 500 BCE. My paper will enlarge upon this division and restrict itself to dealing with the women in the epic age in the situation obtaining in the Epic age in contrast to the situation obtaining in in the Vedic age.

Women in Indian Tradition

Dr. Kanchanmala Pandit
Principal, Mahant Keshav Sanskrit, College, Fathuha, Patna
(A Constituent Unit of K.S.D.S.U., Darbhanga)

Women in Indian Tradition The role and behavior of women in the society is determined by our social structure, cultural norms, value system and social expectations etc. to a great extent. Norms and standards of our society do not change at the same pace as changes take place due to technological advancement, urbanization, cost and standard of living, growth in population, industrialization and globalization. Social and educational policies fail to cope with desired changes in various fields. Particularly, social status of women in India is a typical example of the gap between position and role accorded to them by Constitution and the restrictions imposed on them by social traditions. What is practicable and possible by women and useful for them, in fact, is not within their reach. They have to exist within the framework of social norms and standards, which in turn cause infinite harm.

In Hindu tradition, practices like giving away daughters in marriage and sending them to their in laws' house after marriage and importance attached to sons for maintaining continuity in the line have strengthened male dominated social structure. Women are debarred from joining religious ceremonies during the period of men.

In the views of Manu, "Woman is viewed solely as the mother and the wife and those roles are idealized. The ideal wife is faithful and service to husband and his family members without any complain is virtuous".

A Hindu widow is cursed with misfortune and is neglected in many aspects. She is debarred from participating in any socio-religious functions like marriages, pujas, birthday celebration, etc. which may bring misfortune to them as well as to others. The mere sight of widow is believed to be a barrier to success while attending any function or start of journey. But a widower is not subject to such restrictions.

Male like female never wear any distinctive marks to indicate that he is married. Male widow do not observe fasting for his wife and suffers no restrictions on remarriage. But married woman observe many vratas for the wellbeing of her husband and children and even her dresses change after marriage and more particularly after her husband dies.

In Islamic religion woman cannot be a priest nor can she lead the prayers. She has no place in the formal religious organizations and legal affairs of the community and cannot be a kazi.Women is also deprived of participating in community prayers.

In Buddhism also the male monk is given a higher status than the nun.

Status of Women: Ancient To Modern Time

Dr. Ramshankar Singh
Retd. Principal, Govt. Inter High School

The present study is related to status of women in Indian society from ancient days till today. It gives importance on the position of women in various fields like family life, social life and work situation. It highlights on female feticide, low literacy level of women, women's low nutritional status, women's role in decision making, their position as per Indian tradition etc. This paper also gives emphasis on number of women in total workforce, torture of them by men in family life, social life and in other fields where they are participants. Lastly it concludes on importance of women and role of society for the emancipation of women from male dominated society and their oppression and suppression.

Towards the end of Vedic period (Post Vedic period) women were deprived of social and religious rights. There were not allowed to participate in social and religious functions. Gradually the position of women fell down to the extent that the birth of a girl was regarded as a curse in the family. During Buddhist period Lord Buddha regarded women a source of all evils. Therefore women were allowed low status compared to males. Macaulay's Minute 1835, was responsible to bring renaissance in Indian history by giving stress on English as medium of instruction but forgot the issue of women's education, which was responsible for upliftment of women.

Reasons for deterioration in the status of Women between 500 BCE to 500 CE

Santosh Kr. Jha
Organization Secretary, Bharatiya Itihas Sankalan Samiti, North Bihar

Their status deteriorated considerably during this period. With time and progress, one would expect the condition of people to improve but in this case it was the opposite.

1. The introduction of slavery revolutionized the position of women in the classical period of Greek history, they lost esteem in society. The same thing happened in India when a semi servile status came to be assigned to the Sudra class whose only duty was service of the higher castes. Over time and due to various factors, inter caste marriages started happening during the period 1000 to 500 BCE. The introduction of non-Aryan women into the Aryan household is the starting point to the deterioration in a women's status. Having said that it was non Aryan mothers that gave birth to Veda Vyasa and Krishna. Unfamiliar with religious customs, rituals and Sanskrit the non-Aryan wife would have goofed making the priests angry. In love with his wife, the Aryan man overlooked the shortcomings in his wife. But what about the priests? To avoid this problem it was decided that the whole class of woman were ineligible for Vedic studies and religious duties.
2. Another reason was that Vedic sacrifices became complex making it difficult for the wife to have mastery over them. In the Vedic age, young women would take a Soma stalk and proceed straight to offer it to Indra in a sacrifice performed by her alone. But things became more complex with time. In the Vedic age, she got married at about 16-17 by which she could devote 6-7 yrs. to study but to know all the rituals etc. she would have to marry around 22-24 i.e. about 12 yrs. of study. This was impractical at that point of time. This plus an increase in the desire for a son led to a lowering of the marriage age of girls which in turn discouraged their education? Although, the view that women must not be allowed to perform sacrifices was opposed by parts of society, but its vigorous advocacy by one school coupled with a lowering of the marriage age led to the neglect of the Vedic education of girls.
3. The period of 500 years between 200 BCE to 300 CE was very dark for Northern India. First came the Greeks (190 to 150 BCE), Scythians and Parthians (100 BCE to 50 CE). These barbarians were followed by the Kushanas in the 2nd century CE. Political reverses, war reverses and the decline of prosperity produced a wave of despondency all around. The ascetic ideal of the Upanishads, Buddhism and Jainism which was opposed by Hindu society earlier began to get a real hold over social mind owing to the prevailing wave of despondency at the beginning of the Christian era. It strengthened the hands of those who were opposed to widow remarriage. A woman was to lead a chaste life, to aim for salvation, follow the footsteps of thousands of monks, nuns who had entered the *Sannyasa* stage direct from *Brahmacarya* without passing through married life.
4. Sati – due to the foreign invasions and its consequences for women, the custom of sati, though confined to the warrior class earlier began to gain widespread acceptance, be perceived as a great sacrifice. The tendency to regard women as weaker and not of strong moral fibre got stronger during this period although women as mother, sister continued to be highly respected.
5. The only direction in which the position of women improved was in the sphere of proprietary rights. As society began to discourage widow remarriages, there began to arise a class of childless widows who needed money to maintain themselves.
6. History is witness that conquest of a country implies conquest of its womenfolk. What follows is shameful but reality of life. The wars that preceded the Greek invasion did not result in conquest of women. Invasions resulted in great emphasis being placed on the purity and chastity of women. Naturally, it impacted the way society perceived women.

बदलते परिप्रेक्ष्य और भारतीय नारी

डॉ. सारिका कालरा
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी–विभाग, लेडी श्रीराम कॉलेज, लाजपत नगर, नयी दिल्ली

संस्कृति किसी भी देश का प्राणतत्त्व होती है। इस प्राणतत्त्व का आधार या मूल उपादान धर्म, दर्शन, आचार–विचार और रहन–सहन की मान्यताएँ होती हैं जिन्हें मनुष्य अपनी परम्परा से अर्जित करता है। ये सभी तत्त्व मिल–जुलकर उस देश को विश्व–पटल पर उच्चतम सोपानों पर ले जाते हैं। इस दृष्टि से भारतीय संस्कृति अपनी अनन्य विशेषताओं के कारण संपूर्ण विश्व में अपना एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। इस भारतीय संस्कृति की निरंतर प्रवाहित होती सुदीर्घ परम्परा में नारी की स्थिति, उसकी प्रतिष्ठा, उसकी शक्ति आदि विभिन्न कालक्रमों में निरंतर परिवर्तित होते रहे। विश्व के कई देशों के समान भारतीय समाज अपने प्रारंभ से ही पितृसत्तात्मक रहा है, परंतु भारतीय समाज में नारी की भूमिका अत्यंत विशिष्ट है। पितृसत्तात्मक होते हुए भी वह किस तरह एक परिवार, एक समाज, एक राष्ट्र और उसकी संस्कृति के निर्माण में अपनी अहम भूमिका निभाती है, यह भारतीय परिप्रेक्ष्य में अवलोकनीय है।

वैदिक युग से लेकर आज तक उसकी स्थिति कभी अत्यंत सम्मानजनक, पूजनीय, कभी उपेक्षित, कभी अपने अधिकारों के लिए संघर्षरत नज़र आती है। वहीं वर्तमान सन्दर्भों में देखें तो जहाँ 'स्त्री–विमर्श' के नाम पर राजनीतिक तथा साहित्यिक मंचों पर उसके अधिकारों को लेकर जहाँ बहस नजर आती है, वहीं एक तरफ यह भी उतना ही सत्य है कि उसकी वास्तविकता सिर्फ खोखले नारों में ही दिखाई देती है। संपूर्णता में देखें तो आज चाहे हम शिक्षा, वैज्ञानिक तथा तकनीकी उन्नति, आर्थिक उन्नति तथा नयी सकारात्मक विचारधाराओं से ओत–प्रोत हैं, लेकिन स्त्रियों की दशा और दिशा में सुधार को लेकर शायद उतने प्रयास नहीं हो रहे हैं जितने अपेक्षित थे। इस संदर्भ में इतनी परस्पर विरोधी विधारधाराएँ तथा स्थितियाँ हैं जो उनके विकास में अवरोध ही पैदा करते हैं। यहाँ बहस की तमाम गुंजाइशें हो सकती हैं। परंतु हम यदि अपने अतीत, मध्यकाल को छोड़कर की तरफ झाँकें तो पाएँगे कि आज की स्थिति से कहीं अधिक बेहतर स्थिति में स्त्री वहाँ प्रतिष्ठापित है।

सन्दर्भ पुस्तकें :

भारतीय संस्कृति के स्वर, महादेवी वर्मा, राजपाल एंड संस, 1984
साहित्य और संस्कृति (निबंध–संग्रह), डॉ. देवराज, नंदकिशोर एंड ब्रदर्स,वाराणसी, 1958
बहस में स्त्री, राधावल्लभ त्रिपाठी, सस्ता साहित्य मण्डल, दिल्ली, 2014
ब्राह्मण–ग्रंथों में नारी, मंजुला गुप्ता, जे.पी. पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 2000
भारतीय संस्कृति, डॉ. प्रीतिप्रभा गोयल, राजस्थानी ग्रन्थागार, राजस्थान, 2008
भारतीय संस्कृति में नारी, डॉ. लता सिंहल, परिमल पब्लिकेशन, दिल्ली, 1991
भारतीय संस्कृति विविध आयाम, डॉ. शशिप्रभा कुमार, विद्यानिधि प्रकाशन, दिल्ली, 1996

बौद्धयुगीन नारी

डॉ. एकता पाल
सहायक प्राध्यापक, इतिहास, सुभद्रा शर्मा शासकीय कन्या महाविद्यालय गंजबासौदा, जिला विदिशा, म. प्र.

वैदिक काल में स्त्रियों को पुरुषों के समान सामाजिक व धार्मिक अधिकार प्राप्त थे। वे वेदमंत्रों की रचयिता, अत्यंत विदुषी महिलाएँ थीं, जो परिवार की स्वामिनी मानी जाती थीं। उपनिषद्–काल में नारियाँ ब्रह्मज्ञान की अधिकारिणी होती थीं। धीरे–धीरे उनके प्रति सामाजिक व्यवहार में परिवर्तन आया। नारी स्वतंत्रता व समानता के अधिकारों का हनन हो गया। नारी–शारीरिक तथा मानसिक रूप से पुरुष से हीन समझी जाने लगी। मातृत्व तथा पारिवारिक दायित्वों का निर्वहन ही नारी के जीवन का उद्देश्य हो गया। इस युग में गणिकाओं का एक वर्ग भी उदय हो चुका था, जो नगरों में रूपजीवा का कार्य करती थीं। वैशाली की नगरवधु आम्रपाली इनमें सबसे अधिक विख्यात गणिका थीं।

छठी शताब्दी ई.पू. की इन विषम सामाजिक परिस्थितियों में बुद्ध का पार्दुभाव हुआ। बुद्ध के उपदेशों से अंधविश्वासों और व्यर्थ कर्मकाण्डों में कमी आयी। उनके उपदेशों में मानवतावादी दृष्टिकोण, आडम्बरहीन धर्म, समतामूलक समाज व नैतिक मूल्यों की स्थापना तथा स्त्री–पुरुष समानता के विचारों से नारी के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण में परिवर्तन आया। तत्कालीन समय में बुद्ध ही ऐसे धार्मिक शिक्षक थे, जिन्होंने नारी को वैयक्तिक उन्नति और सामाजिक विकास में बिना किसी प्रतिबंध के अवसर प्रदान किये।

महात्मा बुद्ध प्रारंभ में स्त्रियों के संघ में प्रवेश के पक्ष में बिल्कुल नहीं थे, किन्तु उनके प्रिय शिष्य आनन्द ने उनसे विनम्रतापूर्वक आग्रह करते हुए स्त्रियों का संघ में प्रवेश को उचित बतलाया, तब बुद्ध ने आनन्द के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। इस प्रकार सर्वप्रथम महाप्रजापति गौतमी को बौद्ध संघ में प्रवेश दिया गया। यहीं से स्त्रियों का बौद्ध संघ में प्रवेश प्रारम्भ होता है। आनन्द के सद्प्रयासों और बुद्ध के प्रोत्साहन का ही परिणाम था कि अल्प समय में ही भिक्षुणी संघ की स्थापना हो गई तथा उपासिकाओं के रूप में इन्हें महत्त्व मिला। भिक्षुणी संघ की स्थापना से तत्कालीन समाज में उपेक्षित, परित्यक्ता, संतानहीन, विधवाएँ भी संघ की सदस्या बनीं एवं अपनी सशक्त प्रतिभा से उन्होंने संघ की सार्वभौमिक समृद्धि में सहयोग भी दिया। *थेरीगाथा* इसका प्रमाण है कि इस काल में नारी पुरुषों के बुद्धि विषयक जीवन में सम्मिलित हुई और महत्त्वपूर्ण विषयों पर विचार करने की अधिकारिणी हुई।

Role of Women in Charkha-Khadi Movement of Bihar in 1920-1930

Dr. Sanjay Jha
Associate Professor & Head, P. G. Department of History,
R. B. College, Dalsingsarai, Samastipur (Bihar) L.N.M.U, Darbhanga
Gurugram, Adarshnagar, At+P.O – Dalsingsarai, Distt – Samastipur-848114 (Bihar)
Mob.: 09431406140; e-mail : sjhadsarai@gmail.com

Charkha – khadi was a very comprehensive constructive programme well propounded by Gandhiji, aimed at preparing the nation politically, economically and socially for the impending struggle against the British. The *charkha – Khadi* movement or campaign got remarkable momentum in Bihar under the leadership of Dr. Rajendra Prasad, who was called the chief exponent of *charkha-khadi* movement in Bihar.

On 06 April 1921, a *hartal* was observed and a large number of *charkhas* introduced by June 1921, 48 depots were set up in 11 districts of Bihar to distribute cotton and *charkhas*. With the arrival of M.K. Gandhi on seven days trip of Bihar *charkha-khadi* movement got new momentum and it made wide effect of women of Bihar, when 2-3 women activists openly came forward to promote *charkha* and *khadi*. In August 1921, a big conference held at Buxar in which 200 Hindu–Muslim women participated. Patna, Muzaffarpur, Darbhanga, Madhubani, Bettiah, Saran, Munger, Bhagalpur, Motihari, Hazaribagh, Chotanagarpur, Hajipur, etc. became main centres of *charkha Khadi* movement where hundreds of women started their activities in favour of spinning and rearing of *Khadi*.

Krishana Kumari and Shanti Devi visited Motihari and Bettiah and advocated the use of *charkha – khadi*. Krishna Devi also visited Darbhanga and inspired women to engage themselves in *charkha – khadi* movement, so that struggle against Britishers get proper strength. Sarala Devi campaigned for *charkha – khadi* in Chotanagpur commissionary whereas Savitri Devi Campaigned at Munger on 22 October, 1921. Darbhanga District was called the land of modern tirthas by M.K. Gandhi because of *charkah – khadi* intensive expansion under women. Pandaul, Madhubani, Sakri, Kapisa, Loha, etc. were the centres where Hindu – Muslim women contributed immensely in the favour of *charkha – khadi*. At Belwar, there was a colony of Brahmin women spinners, girls spinning on their nice little talkies and elderly women on their wheels. At Kapisa, a Mussalman village organized by Hindu Youths nearly all the weavers were bound weaving hand spunyarn At Chaibasa in Chotanagpur region, schedule tribe's women were actively engaged in spinning and weaving.

In Oct. 1921 , Sarala Devi in her presidential address to the 16th Bihar Vidyarthi conference at Hazaribagh invited youths and women to participate in *charkha khadi* movement during Non cooperation movement. A large number of women participated in this meeting. Districtwise women's meeting were organized throughout Bihar to propagate *Charkha – Khadi*. On 15 January, 1922, a meeting of women under Lila Singh was organized at Safi Manzil of Muzaffarpur, in which Salam Khatoon. Smt. Kamleshwari Devi and Sharada Kumari too participate and all of them advocated for the manufacturing, use and expansion of *charkha –khadi*. Records of 7,000 *charkhas* and 6000 weavers are found in several research papers at Dighawara thana of Saran district. It came into notice that the materials for above said leaving were provided mainly by women. In return they got money and *khaddar* for their use. Several district Boards including Darbhanga resolved in favour of *charkhas* and *khadi* and made spinning compulsory for girls below ten years.

Charkha – Khadi movement solved the problem of unemployment which again was one of the chief cauces of Indian Poverty. Between 1924-1927, 50,000 women who had formerly nothing to do, got employment. This *charkha – khadi* movement actually got patronage of women in Bihar in which thousands of women and girls engaged themselves actively In this movement and gave enthusiastic support to the national liberation movement of India, the Prominent among them coere Sarala Devi, Shanti Devi, Krishna Kumari, Lila Singh, Savitri Devi, Mrs. Safi, Sharda Kumari, Vindhyawasni Devi, Priyamwada Devi, Bhagawati Devi, Kamaleshwari Devi etc. The active participation of women also raised voice against gender, caste, creed and religious discrimination and paved the way for the Socio-cultural unity and harmony during that period.

वैश्वीकरण एवं भारतीय नारी

डॉ. पीयूष कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर, इतिहास–विभाग, जे.एस.हिंदू पी.जी. कॉलेज़, अमरोहा (उ.प्र.)
डॉ. शिवानी गोयल
असिस्टेंट प्रोफेसर, इतिहास–विभाग, जे.एस.हिंदू पी.जी..कॉलेज़, अमरोहा (उ.प्र.)

वैश्वीकरण का तात्पर्य विश्व के अनेक देशों द्वारा एक विशिष्ट उद्देश्य के लिए किया गया सामाजिक एवं सांस्कृतिक एकीकरण ही वैश्वीकरण है। अर्थात् जब हम अपने सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक विकास के उद्देश्य से अपनी सरहदों को भूलकर सामूहिक प्रयास करते हैं– जब ऐसा प्रतीत होता है कि सारा विश्व एक समाज का रूप ले रहा है।

इस एकीकरण का उद्देश्य समाज के सम्पूर्ण विकास से है। आज विश्व के समस्त देश वैश्वीकरण के प्रभाव में हैं। वैश्वीकरण के माध्यम से आज हम विकास के सर्वोच्च तक पहुँचने का प्रयास कर रहे हैं। वैश्वीकरण का यह प्रभाव समाज के प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित कर रहा है। जिससे होने वाले प्रभावों के कारण विकास के नये–नये लक्ष्य भी निर्धारित होते जा रहे हैं। संसार का प्रत्येक क्षेत्र और प्रत्येक वर्ग वैश्वीकरण की इस प्रक्रिया में अपना योगदान दे रहा है और इससे होनेवाले सकारात्मक प्रभावों को महसूस कर रहा है।

वैश्वीकरण के इस युग में समाज का प्रत्येक क्षेत्र सकारात्मक रूप से प्रभावित हो रहा है। परन्तु भारतीय नारी आज भी वैश्वीकरण के पूर्ण प्रभाव से वंचित है।

यदि वैश्वीकरण के इस युग में यूरोपीय नारी की तुलना भारतीय नारी से करने पर भारतीय नारी काफी पिछड़ी हुई नज़र आती है। इन सबके लिए भारतीय समाज के द्वारा बनाई गई कुप्रथाओं की बेड़ियाँ ही जिम्मेदार हैं, जो भारतीय नारी को विकास की दौड़ में शामिल होने से रोक रही हैं। 21वीं शती के इस वैश्वीकरण का जो प्रभाव आज हमारे समाज में होना चाहिए, वह भी नहीं है। इसके पीछे मुख्य वजह है हमारे समाज के द्वारा समाज के आधे वर्ग को ही विकास की दौड़ से दूर रखना। यह बहुत बड़े दुर्भाग्य की बात है कि 21वीं शती में भी हमारे भारतीय समाज में भी आज लड़कियों को कोख में ही मार दिया जाता है।

'पढ़ लेंगे, लिख लेंगे, हम खुद आगे बढ़ लेंगे
हमें कोख में तो जीने दो
ऐ पुरुष प्रधान समाज के ठेकेदारों
हमें भी इस धरती पर जी लेने दो।
वरना अपने पुत्र को पैदा करने वाली
कोख को ढूँढ़ते रह जाओगे,
फिर क्या सृष्टि को जवाब दे पाओगे ?'

शस्त्रकला में पारंगत पूर्व-मध्ययुगीन नारी

डॉ. तूलिका बैनर्जी
प्राचार्या, महिला महाविद्यालय, बस्ती–उ0प्र0
उपाध्यक्ष,भारती इतिहास संकलन समिति,गोरक्ष प्रान्त

प्राचीन भारतीय वाङ्मय एवं स्थापत्य कृतियों को बृहत् संग्रह के सूक्ष्म अवलोकन से ज्ञात होता है कि भारतीय नारी प्राचीन काल से ऐसे बहुत–सी विधाओं में पारंगत थी जिन पर पुरुषों का एकाधिपत्य था। ऐसे ही अनेक विधाओं में शस्त्रविद्या या शस्त्रकला भी था।

प्राचीन साहित्य में कई ऐसे रानियों का उल्लेख मिलता है जो युद्धकला में निपुण थीं। *रामायण* से ज्ञात होता है कि रानी कैकेयी ने देवासुर संग्राम में राजा दशरथ का साथ युद्धभूमि में दिया था।

महाभारत में सत्यभामा का प्रसंग आया है जो श्रीकृष्ण की पत्नी थीं जिन्होंने कामरूप के शासक नरकासुर के साथ हुए युद्ध में श्रीकृष्ण का साथ दिया था। ऐसे कई उद्धरणों में नारी को युद्धकला में निपुण दर्शाया गया है।

शस्त्रविद्या के क्षेत्र में भी नारी पुरुषों से पीछे नहीं थी। प्राचीन साहित्य में कई ऐसे सन्दर्भ आते हैं जहाँ अस्त्र–शस्त्र से सुसज्जित नारी–सेना का उल्लेख हुआ है। कहीं–कहीं उन्हें राजा के अंगरक्षिकाओं के रूप में दर्शाया गया है जहाँ उन्हें हाथ में खड्ग लिये दिखाया गया है। *अभिज्ञानशाकुन्तलम्* में कालिदास ने एक सन्दर्भ में 'बनसनहस्तभिर्यवनि' का उल्लेख किया है। राजा दुष्यन्त अपने दरबार में जाते समय यवनियों से घिरे रहते थे जिनके हाथ में धनुष–बाण रहता था। यहाँ 'यवनि' शब्द अंगरक्षिकाओं के लिए प्रयुक्त हुआ है।

द्वितीय शताब्दी ई. के दक्षिण भारत के एक यूनानी–कन्नड़ मिश्रित अभिलेख में राजा के अंगरक्षकों एवं सेना में स्त्रियों के होने की बात कही गई है जो धनुष–बाण से सुसज्जित थी।

मथुरा के स्थापत्यकृतियों में भी खड्गधारी अंगरक्षिकाओं को दर्शाया गया है।

पूर्व–मध्ययुग तक आते–आते स्त्रियों की साहसिकता एवं शूरवीरता और भी अधिक मुखर हो गई थी। दक्षिण भारत के कई अभिलेखों एवं साहित्यिक कृतियों में नारियों की शूरवीरता का उल्लेख हुआ है। विजयनगर साम्राज्य में ऐसी स्त्रियों की सेना थी जो अपने साथ ढाल, तलवार एवं खंजर रखती थी। यह राज्याधिकारियों पर निगरानी भी रखती थी। हाजारा–रामा–मन्दिर के दीवारों पर ऐसे कई उच्चित्र मिले हैं जिसमें नारियों का खड्ग, खंजर, धनुष, बाण, भाला, ढाल आदि से सुसज्जित होकर युद्ध करते हुए दर्शाया गया है।

प्राचीन भारतीय साहित्य में युद्धास्त्रों का भी विशद विवरण मिलता है। प्राचीन एवं मध्ययुगीन भारत में युद्धास्त्र के रूप में धनुष, बाण, खड्ग, ढाल, भाला, मुद्गर (गदा), कुल्हाड़ी आदि के व्यापक प्रयोग के प्रमाण प्राचीन साहित्य में मिले हैं।

तान्त्रिक देवी छिन्नमस्तिका का वैदिक एवं बौद्ध साहित्य के आधार पर तुलनात्मक अध्ययन

निगम भारद्वाज

सभी शाक्त पुराणों में एकमत होकर यह कहा गया है कि देवताओं की सम्मिलित शक्ति का नाम देवी है। सभी देवताओं के बल, तेज और पौरुष संसार की रक्षा एवं सृजानात्मक कार्यों में योगदान देने में ही कार्य करता है। देवताओं के तेज से ही देवी की महाशक्ति का प्रार्दुभाव हुआ है। साहित्य के आधार पर छिन्नमस्तिका को पारिभाषित करने का सबसे सरल रूप यह है कि उन्हें तन्त्र की स्वामिनी, तन्त्र को जाननेवाली, तन्त्र को मान्य या फिर तन्त्रस्वरूपिणी ही मान लिया जाय।

भारतीयों के दिल में बसनेवाला जो भी धर्म आज के समय में उपलब्ध है, उनमें देवी के विभिन्न स्वरूपों का वर्णन हमें प्राप्त होता है। साधना भारतीयों के दिल में बसा हुआ रहा है। न केवल वैदिक धर्म, अपितु बौद्ध–साधना में भी छिन्नमस्तिका हमें दूसरे स्वरूप में नजर आती हैं। देवी का स्वरूप और नाम कोई भी हो उन्हें हम शक्ति के रूप में जब पूजा करते हैं तो यह बात समाने आती है कि वह छिन्नमस्तिका ही है।

बौद्ध गंथ साधनमाला की वज्रयोगिनी, वज्रवाराही की तुलना वैदिक धर्म की वज्रवैरोचनी, पार्वती, चण्डिका से किया जा सकता है या नहीं? क्या ये सभी देवी एक ही हैं अथवा भिन्न ? इस आलेख में हमने देवी के विभिन्न स्वरूपों के अध्ययन एवं उनके बौद्ध–साहित्य पर पड़नेवाले प्रभाव का अध्ययन करने का प्रयास किया है।

ऐसा प्रतीत होता है कि बौद्ध तथा शाक्त एक ही प्राचीन धर्मवृक्ष की शाखाएँ हैं। वास्तव में वैदिक, जैन और बौद्ध धर्म एक दूसरे को प्रभावित करते रहे हैं। गोविन्द चन्द्र पाण्डेय के अनुसार बौद्ध तन्त्रों के उद्‌गम और विकास में शैव–शक्ति तन्त्रों का प्रभाव निश्चित रूप से स्वीकार करना चाहिए। 7वीं–8वीं शताब्दियों तक शैव शाक्त तन्त्रों का पूर्ण रूप से विकास हो चुका था। इसी समय बौद्ध तन्त्रों का विशेष विकास प्रारंभ होता है। अतः काल की दृष्टि से शैव तान्त्रिक परम्परा, बौद्ध–तान्त्रिक परम्परा से प्राचीन है। यह स्मरणीय है कि तांत्रिक धर्म के उपासनात्मक होने के कारण किसी–न–किसी प्रकार से ईश्वरवाद अंतर्निहित है, जो कि मूल बौद्ध धर्म के अनुकूल नहीं है।

Yanadi Women and Literature : Traces of unpainted lives in Karnataka

S. Gururaj
Research Scholar, Bharathiar University & Faculty, RIESI Bangalore
Lecturer, Regional Institute of English, South India,
Jnanabharathi Campus, Bangalore - 560056. Karnataka.
e-mail: guru.tsgr@gmail.com; Mob.: 09343720378

Yanadi is a sub-cultural community prominently found in Karnool, Mahaboobnagar, Chittoor and Ananthapur districts of Andhra Pradesh. E. Thurston opines that they originated from Sriharikota of Nellur district. A considerable number of Yanadis migrated to the border areas of Karnataka namely Kolara, Chikkaballapura and Doddaballapura due to changed socio-economic and political situations during 1940s-60s. Surprisingly they are also found in Nilgiri Hills, Arkot district of Tamilnadu and Chikkamagaluru district. They are called 'Pamulavalllu – snake catchers' in Karnataka. They have not become a part of mainstream society still. They live in isolated outskirts of villages or forest areas. This nomadic tribe seems to have settled and Yanadis speak Telugu and Tamil.

Women of Yanadi tribe in Karnataka live a miserable life without social and economic security but still own major share in creating and preserving oral tradition. Yanadi literature includes stories, songs, riddles and proverbs and it is astonishing to find the traces of mythology and epics.

The paper furnishes the details of survey undertaken in Doddaballapura, Chikkaballapura and Kolara areas and throws light on life and literary contributions of Yanadi Women. It documents the struggles of illiterate Yanadi women to provide economic stability to the family. Limited social experiences, poverty and sufferings of life make the substance of Yanadi literature in Telugu but there is no indication of growth in terms of content or art of composition. The paper also gives a review of oral tradition of Yanadi tribe and role of women in preserving the thin tribal tradition. Brief summary of folk stories and songs makes a part of the paper. An attempt is made to reflect upon the portrayal of women in Yanadi literature drawing examples from stories, songs, riddles and proverbs collected during the field study. Reasons for decline of Yanadi oral tradition are also highlighted in the paper.

भारतीय चित्रकला में नारी

डॉ० उमेश कुमार
उपाध्यक्ष, इतिहास संकलन समिति, उत्तर बिहार
एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी–विभाग, बि०म० आदर्श महाविद्यालय, बहेड़ी–847105

भारतीय संस्कृति में नारी का विशिष्ट स्थान रहा है। क्योंकि सृष्टि के संवर्धन हेतु वह इष्टदेव की आराधना एवं उनके अनुष्ठानों को संपादित करती है। वह तो कला की प्रेरणास्रोत है। इसलिए नारी कला की अधिष्ठात्री है। स्नेह की सरिता है। ज्ञान की गंगा है। ममता की प्रतिमूर्ति है। मनुष्य के जीवन में नारी का सान्निध्य ही उसे महान् बनाता है। यहाँ तक कहा गया है कि 'न गृहं गृहमित्याहुर्गृहिणी गृहमुच्यते।' घर की कल्पना स्त्री के रहने से ही पूर्ण होती है। मनुस्मृति में कहा गया है– 'प्रजनार्थं महाभागाः पूजार्हाः गृहदीप्तयः। स्त्रियः श्रियश्च गेहेषु न विशेषोऽस्ति कश्चन ।।' अर्थात्ख स्त्रियाँ चूँकि संतान को जन्म देती हैं, अतः वे शुभ, पूजनीया व घर की आभा हैं। घर में स्त्री व लक्ष्मी के बीच कोई विशेष अंतर नहीं है। सम्पूर्ण भारतीय साहित्य में नारी प्रमुखता के साथ उपस्थित हुई है। साहित्य के साथ–साथ विविध कलाओं में भी नारी के विविध रूपों को देखा जा सकता है।

साहित्य और कला नारी के सान्निध्य में ही फूलती और फलती है। ऐसा कोई साहित्य नहीं है और कोई ऐसी कला नहीं है जिसमें नारी की विविध छटाएँ विद्यमान न हों। हमारा आध्यात्मिक साहित्य भी नारी का पक्षधर है। वैदिक काल में नारी को घर की शोभा माना जाता था। ब्राह्मण–ग्रंथों में कान्य को अशुभ तो माना गया, परन्तु यज्ञ में पत्नी का उपस्थित होना अनिवार्य माना जाता था। रामायणकाल में स्त्री का विशेष महत्त्व दर्शाया गया है।

जब हम भारतीय चित्रकला की ऐतिहासिक परम्परा की चर्चा करते हैं, तब अजन्ता के वैभवपूर्ण भित्तिचित्रों पर ध्यान केन्द्रित हो जाता है, जहाँ जो बौद्धों की साधना एवं पूजा का स्थल रहा है। यहाँ उनकी साधना में कला का मिश्रण है। उनके चित्रों में नारी विविध रूपों में चित्रित हुई है। मैं समझता हूँ कि चित्रों की इस प्राचीन परम्परा में स्त्रियों का चित्रांकन भरपूर हुआ। यह चित्रांकन किसी–न–किसी कथा के आलोक में ही हुआ है। बौद्ध की साधना–स्थली में भी अर्द्धनग्न स्त्रियों की प्रदर्शित चित्रावलियाँ, उनकी साधना को पुष्ट करने का कोई–न–कोई आधार रहा होगा।

विष्णुधर्मोत्तरपुराण के चित्रसूत्रम् में चित्रकला के संबंध में बृहत् चर्चा हुई है। इस क्रम में कहा गया है– 'चित्रंहि सर्वशिल्पां मुखं

लोकस्य च प्रियम्'। अत: प्राचीन शास्त्रों में चित्रकला की महत्ता को स्वीकारा गया है। युग–परिवर्तन के क्रम में अनेक चित्र–सम्प्रदाय हमारे बीच उपलब्ध नहीं हैं। हम सिर्फ साहित्य के माध्यम से उसकी जानकारी रखते हैं। गुप्तकाल में *ललितविस्तर*–जैसे ग्रन्थ की चर्चा है जिसमें चित्रांकन को समृद्ध बताया गया है।

भारतीय चित्रकला में राग–रागिनियों को चित्रित करने की परम्परा रही है। पन्द्रहवीं शताब्दी में चित्रकला ने एक नवीन आयाम ग्रहण किया और उसी समय से चित्रकला का पुनरुत्थान दिखाई देता है।

भारतीय चित्रकला के विभिन्न शैलियों में नायिका–भेद के दर्शन किये जा सकते हैं। राजपूत–चित्रकला के सन्दर्भ में आनन्द कुमारस्वामी ने सैकड़ों चित्र संकलित किये जिसमें नायिकाओं के चित्र विशेष आकर्षण के रूप में प्रस्तुत हुआ है। चित्रकला के भारतीय परम्परा में लघु–आलेखन की विशेष महिमा रही है। इन्हीं के माध्यम से संस्कृत और हिंदी–साहित्य को भी समझने का अवसर मिलता है। कला–समीक्षकों ने यह माना है कि भारतीय चित्रकला के प्रेरणापुँज श्रीकृष्ण रहे हैं। परन्तु श्रीकृष्ण के चरित्र को रूपायित करनेवाली नारी पात्र ही रही है। चाहे वह राधा हो या सामान्य रूप से गोपियाँ। मैं भारतीय चित्रकला का प्रेरणापूँज नारी को ही मानता हूँ।

भारतीय चित्रकला की विभिन्न शैलियाँ स्त्री–चित्रण का प्रमाण रही हैं। किशनगढ़–शैली में रागिनियों, शृंगारिक भावनाओं, वैभव–विलास संबंधी चित्रों में नारी का स्वरूप देखा जा सकता है। इस शैली में प्रमुख नायिका 'वणी ठणी' का चित्रण अत्यन्त प्रसिद्ध रहा। ऐसी सौन्दर्यशाली चित्रों के लिए ही किशनगढ़–शैली प्रसिद्ध रही है।

भारतीय लोक चित्रकला के संवर्धन में नारी समाज का विशेष योगदान रहा है। जनमानस में सर्जनात्मक कला–प्रवृत्ति को अनायास देखा जा सकता है। मन के संस्कार से यह कला जुड़ी होती है। भारत में हजारों लोककलाओं का उदय हुआ है, जिसमें सामान्य मानव–समुदाय की आध्यात्मिक, सांस्कृतिक एवं जनाकांक्षा आदि को स्थान मिला है। इसलिए इस कला ने जन सामान्य के बीच काफ़ी विस्तार पाया है। एक ओर जहाँ यह कला लोकजीवन से जुड़ी हुई है, वहीं दूसरी ओर प्रकृति से। ज़ाहिर है कि लोककला मधुरता, सरसता, स्पष्टवादिता एवं सृजनशीलता का परिचायक है।

कुल मिलाकर देखा जाए तो भारतीय चित्रकला में नारी का विशेष स्थान है। उसके बिना कोई भी कला अधूरी है। नारी के कारण ही चित्रकला के विषयवस्तु का विस्तार हो पाया है।

महाकवि कालिदास के साहित्य में नारी

डॉ० कृष्णा प्रसाद
विभागाध्यक्ष, संस्कृत विभाग, वि०म० आदर्श महाविद्यालय, बहेड़ी

भारतीय समाज में नारी त्याग तथा तपस्या का प्रतीक है। 'मनु' का वचन हम कभी भूल नहीं सकते कि जहाँ स्त्रियाँ पूजी जाती हैं, वहीं देवतालोग आनन्दित रहते हैं–

'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः'' स्त्रियों का पूजन देवताओं के समाराधन का मुख्य साधन है। नारी के तीन रूप है– कन्या, पत्नी तथा माता इन तीनों दशाओं में उसकी रक्षा का, उसकी मान मर्यादा तथा प्रतिष्ठा के संरक्षण का पवित्र कार्य 'पुरुष' के ऊपर ही निर्भर करता है। नारी के तीन रूप हमें दीख पड़ते हैं कन्या रूप, भार्या रूप तथा मातृ रूप। कौमार्य नारी–जीवन की साधनावस्था है। हमारी संस् ति के उपासक संस् त कवियों ने नारी की इन तीनों अवस्थाओं का चित्रण बड़ी ही सुन्दरता के साथ किया है।

कन्या–रूप में नारी का चित्रण कालिदास की कविता में उपलब्ध हेाता है। 'महाकवि कालिदास' आर्य–संस् ति के प्रतिनिधि माने जाते हैं। उन्होंने आर्य–कन्या के आदर्श को 'पार्वती' के रूप में अभिव्यक्त किया है आर्य–कन्या को अदम्य, अजेय तथा जितेन्द्रीय बनाने का मुख्य साधन 'तपस्या' ही है। कालिदास ने अपने 'कुमारसम्भव' में उसके महत्त्व को बड़े ही भव्य शब्दों में प्रकट किया है। शिवाजी के द्वारा मदन–दहन के अनन्तर भग्नमनोरथ पार्वती जगत की समग्र आशाएँ छोड़कर तपस्या की साधना में जुट गयी है। उसकी तपस्या उतनी कठोर थी कि कठिन शरीर से उपार्जित मुनियों की तपस्या उसके सामने नितान्त प्रभावहीन प्रतीत होती है। उसका मनोरथ तरू–फल सम्पन्न होता है। उसे अभीष्ट फल प्राप्त होता है।

महाकवि कालिदास ने सीता के जिस चरित्र का विलास अपनी वैदग्ध्यमयी वाणी के द्वारा अभिव्यकत किया है, उसमें पारिजात की सुगन्ध, है मानव–चित को विकसित तथा पिस्मय–स्थिति कर देने की अद्‌भुत क्षमता है। प्रजापालक की वेदी पर भगवान रामचन्द्र ने अपने जीवन सर्वस्व की बलि देकर जो आदर्श उपस्थित किया है, वह हमारे राजवर्ग के लिए श्लाधनीय तो है ही(उससे भी शलाध्यतर वह आदर्श है, जिसे परितयक्ता जानकी ने अपने पतिदेव रामचन्द्र के प्रति प्रकट किया है।

महाकवि कालीदास ने अभिज्ञान शाकुन्तल नाटक में शकुन्तला का भारतीय नारी के रूप चित्रित करने प्रयत्न किया है वो अपने आप में एक महत्त्व रखती है। शकुन्तला कलावती भी है। उसकी पदरचना काव्यकला की निपुणता का परिचय देती है। पति के प्रति हृदय में श्र)ा और सम्मान की भावना है।

Status of Women Education in India

Dr. Jagdishwari Pd. Mishra 'Basant'
Ayush Guru, C.R.V, Dept. of Health, Govt. of India, New Delhi

Women education in India has also been a major preoccupation of both the government and civil society as educated women can play a very important role in the development of the country. Education is milestone of women empowerment because it enables them to responds to the challenges, to confront their traditional role and change their life. So that we can't neglect the importance of education in reference to women empowerment India is poised to becoming superpower, a developed country by 2020. The growth of women's education in rural areas is very slow. This obviously means that still large womenfolk of our country are illiterate, the weak, backward and exploited. Education of women in the education of women is the most powerful tool of change of position in society. Education also brings a reduction in inequalities and functions as a means of improving their status within the family. To provide the education to everyone, EFA programme was launched in 2002 by the Government of India after its 86th Constitutional Amendment made education from age 6-14 the fundamental right of every Indian child. But position of girl's education is not improving according to determined parameter for women. To know the present position of women education, this study conducted by us. And study concluded that the rate of women education is increasing but not in proper manner. Education means an all round drawing out of the best in child and man-body, mind and spirit. The imperative character of education for individual growth and social development is now accepted by everyone. Investment in the education of its youth considered as most vital by all modern nations. Such an investment understandably acquires top priority in developing countries. The end of all education, all training should be man making. The end and aim of all training is to make the man grow. The training by which the current and expression are brought under control and become fruitful is called education. Education plays a vital role in giving human beings proper equipment to lead a gracious and harmonious life.

Men and Women are just like the two wheels of a chariot. They are equal in importance and they should work together in life. The one is not superior or inferior to other. Unlike ancient times, though currently in majority of rural areas of India women are treated well, but with the orthodoxy they are cut off from the main stream of social life. The rural society did not respect them and give them the due position. They have to suffer and work inside the houses. Thus they are completely depended on men.

वैदिक वाङ्मय में नारी

डॉ. राजकुमार उपाध्याय 'मणि'
एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी–विभाग, सरगुजा विश्वविद्यालय, छत्तीसगढ़

वर्तमान समय में विश्व के साहित्य में नारी चिंतन की दिशा की खोज चल रही है। नारी–विमर्श एवं दलित–विमर्श के अध्ययन, लेखन और चिंतन समकालीन साहित्य में अग्रणी है। इस परिस्थिति में विश्व साहित्य में प्राचीनतम लेखन वैदिक वाङ्मय की ओर साहित्यकारों का ध्यानाकर्षण होता है। अतः वैदिक वाङ्मय में नारी विषयक विविध चिंतन, स्वरूप और विशेषताओं की ओर समाजशास्त्रियों, दार्शनिकों एवं साहित्यकारों का ध्यान जाना स्वाभाविक है। हमारा वैदिक वाङ्मय विश्व साहित्य में जहाँ प्राचीनतम साहित्य है वहीं विविध विषयों एवं ज्ञान से परिपूर्ण है। वैदिक वाङ्मय से सीधा अभिप्राय संस्कृत साहित्य से नहीं लेना चाहिए अपितु वेदकालीन कृतियों यथा – वेद, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद्, पुराण, वेदांग, दर्शन और स्मृतियाँ आदि मानते हैं। इन सभी कृतियों में नारी चिंतन की विशद विवेचना है जहाँ उनके स्वरूप की विभिन्न अवस्थाएँ और स्थितियाँ मिलती हैं। जिसके परिज्ञान से आधुनिक नारी–चिंतन सीमित एवं तत्त्वहीन लगता है। पाश्चात्य की नारी दृष्टि से अत्यन्त व्यापक एवं सिरमौर चिंतन की स्थितियाँ सर्वप्रथम वेदों में ही मिलती हैं जिसमें नारियों को साक्षात् देवमाता एवं देवकन्या के सम्बोधन से आह्वान किया गया है –

'ओऽम् स्तुता मया वरदा वेदमाता। प्रचोदयन्ताम् पावमानी द्विजानाम्।।
आयुः प्राणं प्रजां पशुं कीर्तिं द्रविडं ब्रह्मवर्चसम्। मह्यं दत्वा व्रजत ब्रह्मलोकम्।।'

सृष्टि की सर्जना करने वाले ब्रह्मा को हमारा वेद नारी स्वरूपा ही घोषित करता है – 'स्त्री हि ब्रह्मा बभूविथ'।

वैदिक साहित्य ही एक ऐसा वाङ्मय है जिसमें युग–युगीन शोषित नारियों, अपमानित स्त्रियों को गौरव और गरिमामयी भाव से सर्वाधिक प्रतिष्ठा एवं महत्त्व दिया है। वैश्विक समाज पित्तृसत्तात्मक होने से घर का मालिक पुरुषों को ही माना जाता है किन्तु वैदिक साहित्य गृहस्वामिनी के रूप में परिवार की अधिष्ठात्री नारी को ही माना है। जिस वैदिक युग में नारी को पुत्री, पत्नी और माता के रूप में सम्मान, अधिकार प्राप्त था वह स्थिति महाकवि कालिदास के युग में भी विद्यमान था क्योंकि वे स्वयं स्त्री को मात्र सन्तानदात्री नहीं मानते थे अपितु एक पति के लिए स्त्री को सच्चा सखा, परामर्शदाता एवं साथी भी कहा है। कालिदास ने अपने रघुवंश महाकाव्य में लिखा है– 'गृहिणी सचिवः सखी मिथः प्रिय शिष्या ललिते कला विद्यू।।

ऋग्वेद में जहाँ नारियों को विवाह के लिए आवश्यक माना गया था, तो *अथर्ववेद* में ब्रह्मचर्य–धारण के साथ वैदिक शिक्षा भी ग्रहण करने का अधिकार तथा कन्या को सुयोग्य ब्रह्मचारी पति के वरण करने का स्वाधिकार भी उपलब्ध था। वर्तमान समय में स्त्रियों की अवैवाहिक स्थिति कोई नयी क्रान्ति नहीं है क्योंकि अनेक ऐसी ब्रह्मवादिनियों के उल्लेख मिलते हैं जो जीवनपर्यन्त वेद शिक्षा का अध्ययन–अध्यापन करती थीं तथा पारिवारिक दायित्व से मुक्त भी रहती थीं। ये ब्रह्मवादिनियाँ वेदाध्ययन के साथ–साथ उपनयन–संस्कार से युक्त अग्निहोत्र कर्म में भी सन्नद्ध होती थीं। किन्तु द्वितीय कोटि की वैदिक नारी सद्योवाह अपने गृहस्थ जीवन को सम्यक् पूर्ण वहन करते हुए संतति उत्पन्न कर सफल जीवन व्यतीत करती थी। इन दोनों के मध्य एक तीसरे नारी वर्ग की स्थिति भी दिखाई देती थी जो न तो गृहस्थ जीवन में होती थी और न ही ब्रह्मचर्य, किन्तु ये ऋषि–मुनियों के साथ अपना जीवन व्यतीत करते हुए धार्मिक कार्यों में संलग्न रहती थीं। कुछ ऋषि स्त्रियाँ विश्वरा, लोपादुमा, सिक्ता और घोषा आदि नारियों ने ऋचाएँ भी रची थीं जो *ऋग्वेद* के विभिन्न मण्डलों में विद्यमान है। ऐसी ऋषि–स्त्रियाँ प्रायः कवयित्रियों के कोटि में गिनी जाती हैं। सुलभा, मैत्रेयी, वाक्प्राचितेई और गार्गी आदि अनेक विदुषी स्त्रियाँ हैं जो अपने काल में वक्तृता के लिए सर्वाधिक प्रख्यात रही हैं। अतः इन नारियों को जिस समाज में शिक्षा देने और प्राप्त करने का अधिकार प्राप्त था वहाँ उन्हें राजकीय कार्यों में सहभागिता एवं प्रशासिका के होने का उल्लेख भी *अथर्ववेद* में मिलता है परन्तु मध्यकाल (मुग़ल आदि शासनकाल) में उपजी कुरीति बालविवाह वैदिक काल में कहीं नहीं उल्लिखित है क्योंकि ऐसे समृद्ध–प्रगतिशील नारी समाज में बाल विवाह की प्रथा की कोई सम्भावना नहीं हो सकती है। *ऋग्वेद* में स्वयंवरा नारी के संकेत भी मिलते हैं जहाँ युवक एवं युवतियाँ मनोनुकूल पति–पत्नी को चुनकर सुखी जीवन व्यतीत करते थे। ऐसे उत्कृष्ट समाज में बालविवाह की प्रथा व पर्दाप्रथा–जैसी सामाजिक कुरीतियों का वैदिक काल में कोई स्थान नहीं था इसमें उल्लिखित अनेक प्रमाणों से ये सभी विषमताएँ स्वयं निर्मूल सिद्ध हो जाती हैं परन्तु ऐसी स्वच्छन्दताओं के परिणाम स्वरूप सामाजिक असंतुलन एवं विषमताएँ आ जन्मी। परिणामतः अनेक स्मृतियों का जन्म हुआ और नारियों के अनेक सिद्धान्त बन गये।

नारी : एक साम्राज्ञी व वीरांगना की भूमिका में

प्रो. दिपुबा देवड़ा
प्रतिकुलपति, हेमचन्द्राचार्य उत्तर गुजरात यूनिवर्सिटी, पाटण, गुजरात

प्रेम, करुणा, पवित्रता, त्याग व सतीत्व की मूरत यह भारतीय नारी की सर्वानुभूत पहचान है। वैसे तो प्रकृति ने प्रत्येक नारी को यह सारे मृदु भाव विशेषरूप से, विशेष मात्रा में दिए है किन्तु त्याग और सतीत्व के गुण, भारतीय नारी का विशिष्ट अस्तित्व प्रस्थापित करते है। यह इसलिए कि "त्याग" व "सतीत्व " के गुणों की वजह से भारतीय नारी में प्रेम व पवित्रताके गुणोंकी तीव्रता बढ़ जाती है। भारतीय नारी ने इन गुणोंको आत्मसात किया है। और यही सारे गुण उसे "सबला" बनाते है, "अबला" नहीं। यही प्रेम उसे अपने कुटुंब, समाज व् राष्ट्र के हित के लिए पुरुषार्थ करनेके लिए प्रेरित करता है। यही करुणा व पवित्रता उसे कठिन से कठिन समय में भी आनेवाले सुखद समय के लिए आशान्वित रखती है। यही त्यागकी भावना उसमे अपने कुटुंब, समाज व राष्ट्र के लिए बलिदान देनेकी हिम्मत भर देती है तो यही सतीत्व उसे अपने पतिके पदचिन्हो पर चलनेकी कुशलता देती है, फिर चाहे ये पदचिन्ह उसे राजयसत्ता तक या युध्धभूमि तक क्यों न ले जाते हों।

इस लेख में भारतीय नारीको किंचित समयके उपलक्ष्मे न देखते हुए, एक भूमिका के रूपमें चित्रित करनेका प्रयास किया है। इतिहास गवाह है नारीकेँ दृष्टांतरूप प्रेमका, त्यागका, साहसका व् उसकी विचक्षण बुध्धिका। ऐसी ही कुछ साहसी, विचक्षण व शक्तिमान साम्राज्ञी व वीरांगनाओंसे भारतीय इतिहास उज्जवल है।वैदिक समय से लेकर वर्तमान समय तक भारतीय नारियों ने साम्राज्ञी व वीरांगनाकी उत्कृष्ट भूमिका निभायी है। विषपाला, रानी देवी अहिल्याबाई, रानी क्षमावती, रानी गौरीपार्वती, जीजाबाई, रानी अबकका देवी, रानी चेन्नम्मा इत्यादि प्रतिमानरूप है।

इन भारतीय नारियोंके जीवनावलोकन से स्पष्ट रूपसे प्रतीत होता है कि वे केवल वर्तमान समय की भारतीय नारी के लिए ही नहीं किन्तु पूरे विश्व की नारियों के लिए "स्त्री सशक्तिकरण" के आदर्श उदाहरणस्वरुप हैं। अतः पूरे विश्व की नारियों के लिए उनका जीवनचरित्र प्रेरणादायी है। उनके जीवनावलोकन से हमें यह भी प्रतीत होता है की स्त्री सशक्तिकरण के जिन गुणोंको हम आजकी नारीमें विकसित करना चाहत्ते है, वे भारतीय नारीमें वैदिक काल से ही निहित हैं। ये सारे गुण उनमें आनुवंशिक रूप से ही हैं।

भारतीय नारी की आदर्श : सीता

सी०ए० मुकेश शर्मा
राष्ट्रीय सह–कोषाध्यक्ष, अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना

नारी जाति को विधाता ने ललित, दिव्य, मृदु और मधुर गुणों की राशि बनाया है। इन गुणों का जैसा विकास नारी जाति में होता है, वैसा अन्यत्र कहीं दृष्टिगोचर नहीं होता। नारी दया का अवतार, प्रेम की परम धारा, सौन्दर्य की प्रतिमा, मधुरता की मूर्ति है। वह संसार का मूल है और गृहस्थाश्रम की जीवनशक्ति है। इसलिए देववाणी–साहित्य में नारी को 'देवी' शब्द से समादृत किया गया है और दया आदि मन के जितने कोमल और उच्च भाव हैं, उनका शब्दमात्र में स्त्रीलिंग से ही निर्देश किया गया है। नारी को नर की खान कहा गया है। संसारियों का संसार, गृहस्थियों की गृहस्थता, सुकर्मियों के सुकर्म और धर्मात्माओं के सब धर्मों का स्रोत नारी है।

जिस नारी जाति की इतनी महिमा है, सभ्य समूहों में जिस का इतना समादर है, उसमें आदिसृष्टि से समस्त संसार में सर्वोत्कृष्ट और आदर्श रूप में, किस देवी ने इस वसुन्धरा को अपने जन्म से पवित्र किया था, यह प्रश्न मानव–समाज की शिक्षा के लिए इतिहास की दृष्टि से अत्यावश्यक और महत्त्वपूर्ण है। इस के उत्तर के लिए सारे संसार के प्राचीन और अर्वाचीन स्त्री–रत्नों के चारु चरित्रों की तुलनात्मक दृष्टि से जाँच–पड़ताल की जाये तो सर्वसम्मति से एक ही नाम निर्धारित होगा और वह तत्त्वज्ञानी–शिरोमणि मिथिलाधिपति राजर्षि विदेह जनक की आत्मजा और सूर्यकुल कमलदिवाकर मर्यादापुरुषोत्तम महाराज रामचन्द्र की धर्मपत्नी सती–शिरोमणि श्री सीता जी का प्रातः स्मरणीय पवित्र नाम है। भूतकाल में तो श्रीसीता की समता करनेवाली कोई नारी दिखाई ही नहीं देती, किन्तु भविष्य भी उन की समकक्षा को उत्पन्नकर सकेगा, इसमें सन्देह है। बड़े–बड़े क्रान्तिदर्शी महाकवियों की प्रतिभा खोज करते करते थक गई, किन्तु उस को श्री सीता जी की उपमा न मिल सकी। इसलिए आदि कवि वाल्मीकि ने श्री सीता जी को अनुपमा कहा है। क्या सरलता में, क्या सुशीलता में, क्या सच्चरित्रता में और क्या पतिपरायणता में, सभी विषयों में सीता देवी अद्वितीय थीं।

'होनहार बिरवान के होत चीकने पात' इस लोकोक्ति के अनुसार सीतादेवी बाल्यावस्था से ही होनहार थीं। यह उन के जन्म–जन्मान्तरों के सुकृत्यों का फल और सौभाग्य था कि उनका महाराज जनक जैसे अध्यात्मतत्त्ववेत्ता तथा धर्मात्मा पिता के यहाँ जन्म हुआ था। महाराज जनक अपने समय में अध्यात्मविद्या में ऐसे निष्णात माने जाते थे कि ब्रह्मजिज्ञासु तपस्वियों की मण्डली ज्ञानचर्चा के लिए उनको सदैव घेरे रहती थी ओर वे निष्काम भाव से राज्य–व्यवहार चलाते हुए भी जल में उत्पन्न कमलपत्र के समान संसार से पृथक् रहते थे। ऐसे सर्वगुणसम्पन्न राजर्षि जनक की आत्मजा श्री सीता सर्वगुणों की खान क्यों न होती!

यद्यपि श्रीवाल्मीकिरामायण और पुराणों में श्री सीता जी को 'जानकी', 'वैदेही', 'जनकात्मजा' और 'जनकसूता' पदों से जनक की पुत्री बतलाते हुए भी उन को अयोनिजा कहा गया है और उनके 'सीता' नाम को लेकर उन की उत्पत्ति के विषय में एक यह अलौकिक कथा वर्णन की गई है कि यतः वे सीता यज्ञ में हल चलाते हुए महाराजा जनक को पृथिवी में सीता (हल के खूड़) में मिली थीं, इसलिए उनका नाम 'सीता' पड़ा था। परन्तु इस कथा का ऐतिहासिक और मानवीय दृष्टि से तत्त्वानुसन्धान किया जाये तो उसमें तथ्यांश इतना ही प्रतीत होता है कि महाराज जनक के सीतायज्ञ के अवसर पर ही उनका जन्म होने के कारण उन का नाम 'सीता' रखा गया था।

विनम्र श्रद्धाञ्जलि

यह मातृभूमि मेरी...

वह मातृभूमि मेरी, वह पितृभूमि मेरी
पावन परम जहाँ की, मंजुल महात्म्य धारा
पहले ही पहले देखा, जिसने प्रभात प्यारा
सुरलोक से भी अनुपम, ऋषियों ने जिसको गाया
देवेश को जहाँ पर, अवतार लेना भाया
वह मातृभूमि मेरी, वह पितृभूमि मेरी
यह मातृभूमि मेरी.....

ऊँचा ललाट जिसका, हिमगिरि चमक रहा है
सुवरण किरीट जिस पर, आदित्य रख रहा है
साक्षात् शिव की मूरत, जो सब प्रकार उज्ज्वल
बहता है जिसके सर से, गंगा का नीर निर्मल
वह मातृभूमि मेरी, वह पितृभूमि मेरी
यह मातृभूमि मेरी....

सर्वापकार जिसके, जीवन का व्रत रहा है
प्रकृति पुनीत जिसकी, निर्भय मृदुल महा है
जहाँ शान्ति अपना करतब, करना न चूकती थी
कोमल कलाप कोकिल, कमनीय कूकती थी
वह मातृभूमि मेरी, वह पितभूमि मेरी
यह मातृभूमि मेरी.....

वह वीरता का वैभव, छाया जहाँ घना था
छिटका हुआ जहाँ पर, विद्या का चाँदना था
पूरी हुई सदा से, जहाँ धर्म की पिपासा
सत संस्कृत ही प्यारी, जहाँ की थी मातृभाषा
वह मातृभूमि मेरी, वह पितृभूमि मेरी
यह मातृभूमि मेरी.....

माननीय श्री अशोक जी सिंहल

(१५ सितम्बर, १९२६-१७ नवम्बर, २०१५)

Akhila Bhāratīya Itihāsa Saṅkalana Yojanā
Mysore (Karnataka) : December 24-26, 2015

10th National Conference of Akhil Bharatiya Itihas Sankalan Yojana

Mysuru (Karnataka)

Mārgaśīrṣa Śukla Caturdaśī-Pauṣa Kṛṣṇa Pratipadā, Kaliyugābda 5117
i.e. December 24-26, 2015 CE

Reception Committee

Sri Jagadish Shenoy
Dr. Pradan Gurudattha
Dr. Vaman Rao Bapat
Sri Venkata Ramu
Dr. Manjunath
Dr. Shantala
Sri Vasudev Bhat
Dr. AV Narashimh Murthi
Dr. A Sundara
Dr. Nagaraj
Dr. Saraswathi
Dr. Srinivasa Padigar
Dr. Rajaram
Dr. G.B. Kulakarni
Dr. Ananda Kulagarni
Pratapa Shimha
Go Madusudhana
Sri Tontadharya
Ramadas & others

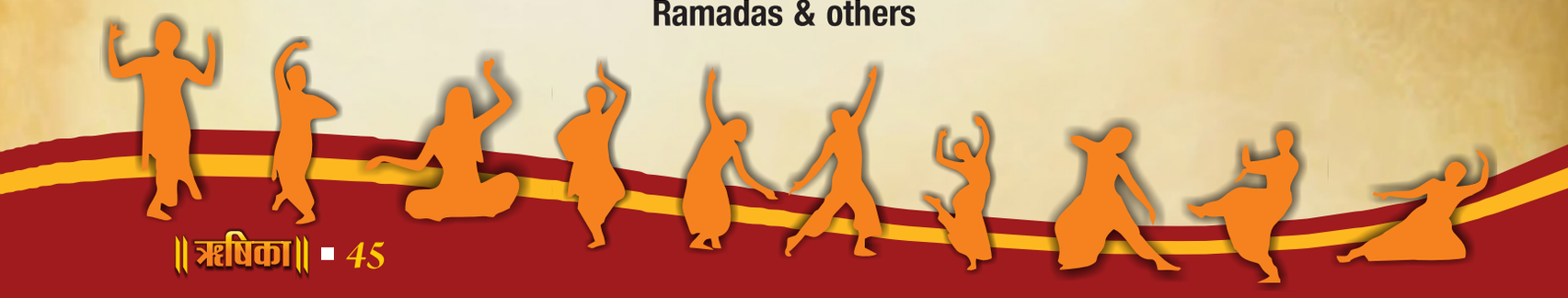

हरियाणा
एक वर्ष-सर्वत्र हर्ष

योग
को प्रोत्साहन हेतु हरियाणा सरकार के महत्वपूर्ण निर्णय

अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस
21 जून
सामंजस्य एवं शांति के लिए योग

- 1050 गांवों व सभी शहरों में योगशालाएं।
- हर प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र में आयुष विंग की स्थापना।
- योगशालाओं में योग के अतिरिक्त पांच क्षेत्रीय खेलों का प्रशिक्षण।
- आयुष विश्वविद्यालय स्थापित करने की रूपरेखा तैयार।
- पंचकूला में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर का योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा संस्थान की योजना।
- मोरनी क्षेत्र में लगभग 100 एकड़ भूमि पर हर्बल फोरेस्ट की स्थापना करने का निर्णय।

"योग : मन एवं शरीर के बीच सामंजस्य"

मनोहर लाल, मुख्यमंत्री, हरियाणा

बने घणे काम ईबै एकै साल
कथनी-करनी एकै ढाल

Q&A

with

RK Srivastava

Chairman

Airports Authority of India

In a recent Tate-e-tate with RK Srivastava, Chairman, Airport Authority of India (AAI), sheds light upon plans for the aviation sector in years to come

Q. Sir, at the outset I would like to compliment you that having such a long stint of over 30 years in the most sought after Cadre i.e. IAS and having reached such a senior position of Additional Secretary level, you have taken the honorous responsibility of steering the countrys most vibrant organization dealing with airport infrastructure i.e. Airports Authority of India. While I received the Press Release on your joining from PR Department of AAI, immediately after that I came across your message to the employees of AAI which has been put on AAIs website. Sir, you will agree that civil aviation in general and airports in particular have come out of category of elite class service. Would you like to dwell upon this in the light of emphasis you have laid upon service parameters in your message?

Ans. In the first instance, let me also thank you for taking the initiative for this meeting. While I appreciate your concern about the sector, as regards a way forward for AAI to steer up on the map of new growth and height in the field of infrastructure development and safety in the aviation sector, I have given emphasis to customer friendliness in our enabling services at airports and I have deliberated upon pro-active approach in gauging the emerging trends, expectation and demands of different stakeholders in aviation sector in general and passengers, airlines, cargo industry and security in particular.

How has the civil aviation sector been progressing over the past year?

Ans. Your question is very straight forward and very specific to the past year. But let me begin with that the civil aviation sector in India started to cater to the needs of big businesses and well healed gentry which is also termed as elite class who needed to travel fast, both within India and abroad, and they wanted their goods and mail to travel equally fast. This scenario, over a period of time, has totally changed. Today civil aviation sector contributes significantly to the process of economic development.

As far as India is concerned, we are the 9 th largest aviation market with traffic showing almost double digit growth. The policy initiatives and modernization of both airport as well as ANS infrastructure have propelled Indian aviation sector to a new high growth path. Connectivity has become the Mantra for the overall progress and development, not only for the city where it exists, rather for the adjoining districts and states as well encompassing more and more catchment areas; of-late, airports are being termed as economic magnets. As on date, AAI manages 125 airports including civil enclaves, 60 of them have been recently developed and modernized, therebyprovisioning capacity ahead of demand.

Not resting with this, AAI has further evolved itself to undertake development of airports in Tier-II and Tier-III cities.

AAI also provides Air Navigation Services across the nation and has taken up ANS upgradation for enhancing safety, efficiency and capacity of the air-space of the country.

Coming back to your question on progress over the past year, to be specific, during the recently concluded financial year i.e. 2014-15, Air Traffic at Indian airports has reached to 190 million passengers, 1.60 million aircraft movements and 2.5 million Metric Tonnes of cargo indicating growth of 12.6 per cent in pax, 4.3 per cent in the aircraft movements and 11.0 per cent in cargo over the previous year. Further, during the current financial year from April to September, the growth in passenger traffic has further improved to 17 per cent due to significant growth of 20 per cent in domestic passenger traffic. Growth in aircraft movement has also increased to 8 per cent. This shows scope for rapid development of civil aviation sector in India. With the announcement of draft Civil Aviation Policy, last week, the sector is going to be propelled on the high growth chart.

Q What are the measures being taken by AAI regarding the safety and security at airports?

Ans. Safety and security are the prime concerns of civil aviation activity around the globe and India is no exception. Security at airports is governed by the specific provisions of International Civil Aviation Organization (ICAO). Within India, BCAS lays down AVSEC norms for security. AAI has enabled all the provisions under its domain commensurating with the same.

Security at airports is being looked after by CISF and the respective State Police. CISF has been introduced at most of the AAIs airports. Survey and resurveys are carried out in coordination with BCAS (Bureau of Civil Aviation Security) to assess the threat perception at the respective airports and based on that we adopt the security measures.The intensity of security and provision of equipment is enhanced as per the sensitivity of the airport. We have provided latest security equipment, gadgets and infrastructure to the personnel who are dealing with the security function which includes X-Ray baggage machines, Door Frame Metal Detectors, Hand Held Metal Detectors supported by CCTV at various airports. AAI has also provided explosive trace detectors and inline X-Ray Baggage System at its airports as per need basis.

Q. What are the AAIs plans, in terms of airport construction, upgradation and planned investments over the next 2-3 years?

Ans. At the outset, let me state that AAI has taken all-round initiatives to ensure adequate infrastructure at its airports. With the rising air traffic, improved facilities and services for maintaining desired level of customer satisfaction and commercial exploitation for maintaining the growth of the organization, we are continuously adding more and more airports in the country to meet the expectations of people, thereby enhancing wider connectivity. We have plans of spending 4-5 billion dollars in the next seven years, to add the new capacity of 70 million passengers at the Airport. However, with the new policy aiming to increase the ticket sale from 70 m to 300 m per annum, the CAPEX requirement would be two and a half times more than what is planned today. This, however, would be factored in our revised calibration of supply with demand in different fields of Aviation Infrastructure.

Presently Construction of new Terminal Buildings are being taken up at Portblair, Kishangarh, Pakyong, Hubli, Tezu, Vijayawada & Belgaum .In order to meet the objective of inclusive growth, AAI in line with Government objectives, plans to enhance Regional and Remote area air connectivity in a time bound manner. Under this AAI has been mandated to develop five airports viz. Kishangarh, Belgaum, Hubli, Jharsuguda and Tezu for which work is in progress.

AAI will be taking up the implementation of Airport Infrastructure projects on Turnkey/ Design Built model for which EOI has been called for empanelment of PMC. To bridge the gap between capacity and demand, expansion and upgradation of Airports are planned at Lucknow, Guwahati, Leh, Srinagar, Agartala, Trichy, Trivandrum, Port Blair and Vijaywada Airports . Terminal Buildings at Jammu, Trichy, Pune, Calicut and Srinagar are also being expanded and modified. For further improving regional connectivity, AAI is taking up joint ventures with State Governments to develop airports in the remote areas.

Q. As the Chairman of AAI, what are your top priorities for the sector in the next 1-2 years?

Ans. The top priorities for the sector in the next 1-2 years would be to transform the image of AAI airports to be the most customer friendly airports at par with anywhere in the globe. We aim to achieve this by augmenting our airports with state of the art infrastructure, provision of new facilities for air navigation, enhancing safety both in air and ground, improving efficiency of air operations in Indian air-space.

We plan to make airports self-sustaining commercial enterprises, by increasing the non-aeronautical revenue. Our endeavour is to make the stakeholders potentially the State Governments partner in our journey of growth. We plan to augment Food and Beverage facilities, retail services, introducemore international and national brands at airports, provide Business Lounges thus enhancing the options for the travelling public for greater convenience and a sense of hospitality.

AAI also plans to extend CUTE (Common User Terminal Equipment) and CUSS (Common Use Self-Service) services at most of the airports, Implement Inline baggage screening with self-service kiosks, provide PBB (Passenger Boarding Bridges) at most of the airports, provide travellers with information on mobile/ gadgets, improve the ambience at the airports, improve signages for ease of finding ways in and around the airport, augment parking facilities and provide value added services like paid porters and kids entertainment etc.